Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ॐ

श्रीशिवशान्तस्तोत्रतिलकम्

শিবশান্তস্তোত্রতিলকম্

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
श्रीश्रीधरस्वामिरचितम्

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीशिवशांतस्तोत्रतिलकम्

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
श्रीश्रीधरस्वामिरचितम्

श्रीसमर्थरामदासस्थान
सज्जनगढ़निवासी
पोस्ट परली, जिला सातारा

श्रीधर ग्रन्थ प्रकाशन मंडल
काशी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सन्मार्ग प्रेस, टाउनहाल, बनारस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवान श्री शंकर

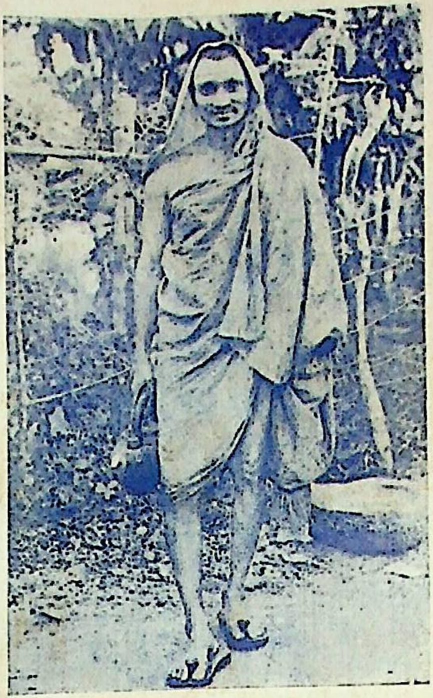

श्रीधर स्वामी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ ॐ नमः शिवाय ॥

श्रीशिवशान्तस्तोत्रतिलकम्

यदेकमिह शाश्वतं रहितनामरूपात्मकम् ।
प्रपंचशमनं वरं सुखघनं श्रुतौ तन्यते ॥
यतो नहि भिदा च यत्सततसौख्यदं पावनम् ।
तदाश्रय मते ! सदा ह्यविकृतं स्वरूपं शिवम् ॥ १ ॥

ए मेरी बुद्धि ! तू निर्विकार शिवजी का सदा आश्रय कर। जो भगवान् शिव समस्त संसार में एकमेव अद्वितीय हैं— नामरूपरहित शाश्वत तत्व हैं। जो शिवस्वरूप प्रपञ्च का उपशम और श्रेष्ठ आनन्दघन ऐसा वेद में प्रतिपादित है। जो शिव सर्वप्रकार भेदों से वर्जित सतत स्वरुपानन्द का दाता परमपावन है ॥ १ ॥

शरीरमतिकश्मलं न रुचिरं न वा सौख्यदम् ।
अतीव दुरितं च यद्रुधिररेतसो मिश्रणम् ॥
पवित्रमतिशोभनं स्मरसि जन्म किं तस्य तत् ।
मते जहिहि माऽस्तु ते श्रय परं स्वरूपं शिवम् ॥२॥

अरी बुद्धि ! यह शरीर अत्यन्त मलिन है। वस्तुतः न शोभन है न तो सुखकर है। यह तो अत्यन्त पाप का फल है। केवल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रुधिर और रेतस् का सम्मिश्रण है। उसके जन्म को क्या तू पवित्र समझती है किं वा शोभन ! अरी ! छोड़ ! यह तेरे सुख के लिये नहीं। तू परम स्वात्मरुप शिवजी का आश्रय कर ॥ २ ॥

कचास्थिनखचर्मके वपुषि रम्यता का मते ! ।
मलेऽत्र मनुषे कथं नर इतीह नारीति च ॥
विमुह्यसि कथं, कथं तव विचिंतनीयं वपुः ।
भ्रमं त्यज, सुनिश्चिनु, श्रय परं स्वरूपं शिवम् ॥३॥

केश अस्थि नख चर्म यही तो शरीर होता है। इसमें कौनसी रम्यता वास्तव में हो सकती है ? यह तो मल मूत्र मांस आदि गन्दी चीजों का एक समूह है ? उसको नर अथवा नारी मानती कैसे हो ! और किस तरह मोह में आती हो ! किस प्रकार वह चिन्तनीय हो सकता है ? अरी ! तू भ्रम को त्याग निश्चय कर और परम आत्मस्वरूप शिवजी की शरण जा ॥३॥

करोमि किमहं बलात्किमपि मां वृथाऽऽकर्षति ।
ब्रवीषि यदि हे मते ! श्रुणु यदेतदाकर्षति ॥
तनौ वसति निश्चयोऽहमिति यः स पाशस्तव ।
तनुस्तु पुरुषस्त्रियोर्मिथुनतः शिवं ह्याश्रय ॥ ४ ॥

अरी बुद्धि ! यदि तू कहती है कि "मैं क्या करूँ ! मुझे व्यर्थ ही कोई बलात खींच ले जाता है।" तो सुन ! वह क्या चीज है जो तुझे खींच ले जाती है ? शरीर में अहं-बुद्धि जो तुझको है, वही तुझे आकर्षण करनेवाला पाश है। परन्तु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शरीर तो स्त्री-पुरुष मिथुन से उत्पन्न मलिन पदार्थ अतएव हेय है। इसलिये परम पवित्र श्री शिवजी का तू आश्रय कर! ॥४॥

मया किमपि शक्यते न खलु खानि चित्तानिलाः।
अतीव कटुदुर्जया यदि तु मन्यसे तद्वृथा॥
अये त्वमसि शासती किल तथा प्रमुख्या यतः।
विलोभय न मां मते! त्यज, भज स्वरूपं शिवम्॥

यदि मानती हो कि मैं कुछ नहीं कर सकती क्योंकि ये इन्द्रियां, चित्त एवं प्राणादि वायु अत्यन्त दुर्गम हैं; तो यह धारणा तेरी वृथा है! अरी! तू तो इन्द्रियगण चित्त एवं प्राणादिकों का शासन करनेवाली सबकी मुख्या है। (बुद्धि के अधीन ही इन्द्रिय और चित्त आदि का कार्य रहता है) अतः मुझे भुलाओ मत! छोड़ इस शरीर में अहं-बुद्धि को, तू स्वस्वरूप श्री शिवजी का भजन कर॥ ५॥

न कश्चिदिह जन्मभागनुभवेत्सुखं जन्मना।
न निश्चिनु मते! सुखं सुखकरो न देहाश्रयः॥
न दर्शयति जन्म तत्सुविमलं सुरम्यं शिवम्।
दुनोति च मुहुर्मुहुर्विषयवासनाभिर्यतः॥६॥

संसार में कोई भी जन्म धारण करनेवाला सुखानुभव कर नहीं सकता। अरी बुद्धि! तू निश्चय समझ कि जन्म के कारण सुख हो नहीं सकता, क्योंकि देह का सम्बन्ध सुखकर नहीं है। जन्म कोई निर्मल आनन्दघन शिवतत्व को नहीं दिखाता किन्तु बार बार विषयवासनाओं के कारण दुःख ही देता है॥ ६॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुखाय यतसे मुहुस्तदपि वेत्सि किं तत्सुखम् ।
जुगुप्सितमिदं मते ! विषयवर्तनं दुःखदम् ।।
मते ! व्रज सदाशिवं सुखघनं पवित्रं विभुम् ।
तदीयसुखमज्जनं हरति वासनाचेष्टितम् ।। ७ ।।

अरी ! तू सतत सुख के वास्ते प्रयत्न करती है, किन्तु जानती है वह सुख क्या चीज है ? बुद्धे ! यह विषयप्रवृत्ति निन्दित एवं दुःखद है । तू इसे छोड़ आनंदघन प्रभु परमपावन शिवजी की शरण जा । उस शिवस्वरूप आनंद में तू मग्न हो जा । तेरी वासना के सब उपद्रव उससे शांत हो जायेंगे ॥ ७ ॥

कथं भवति विस्मृतं जठरजातदुःखं भवे ।
ह्यहो कठिनगर्भवास इति यत्कृते हे मते ! ।।
स काम इह यौति तन्निरय एव यत्त्वां पुनः ।
नरप्रमदयोर्वपुर्निरयदा पुनर्माऽस्तु ते ।। ८ ।।

माता के जठर में जो दुःख भोगना पड़ा है वह कैसे भूला जा सकता है ? जिसके लिये, 'अहो मातृगर्भवासः !' कहा जाता है । ऐसी दशा में उसी नरक में काम तुझको नियोजित करता है ? छिः ! इस प्रकार नरकदायी स्त्रीपुरुष शरीर की इच्छा तुझे न हो ! ॥ ८ ॥

अहो प्रबलदर्पकोऽयमिति माऽस्तु ते भीर्वृथा ।
यदि त्वमिह शक्यसे न किल तं च दग्धुं तदा ॥
भजस्व नतशंकरं प्रथितकामशत्रुं मुदा ।
दहिष्यति तवाप्यसौ पुनरपि स्वयं लीलया ।। ९ ।।

अहो ! यह काम अतीव प्रबल है ऐसी वृथा भीति तुझे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न हो ! तू उस काम को जीतने में, उसको भस्म करने में अशक्त है तो प्रणतों का मङ्गल करनेवाले कामवैरि उस शङ्कर का भजन कर, वह शङ्कर तेरे लिये पुनः कामदहन की लीला अवश्य करेंगे ॥ ९ ॥

अये ! तव न संशयोऽस्तु न च निघृणोऽयं शिवः ।
मतेऽतिदयया युतो न च परीक्षते त्वां क्वचित् ॥
वरं समनुलेभिरे कपटचाटुका राक्षसाः ।
अलं शठय मा चिरं भज शिवं स न त्वां त्यजेत् ॥

अरी ! तू बिलकुल संशय न कर । श्री शिवजी कोई निर्दयी नहीं हैं । अरी बुद्धि ! वह अत्यंत दयालु है वह भोलानाथ कठिन परीक्षा भी लेता नहीं है । बड़े बड़े छली कपटी मुहपर प्रशंसा करनेवाले राक्षसों ने भी थोड़े में उससे वर प्राप्त किये हैं । बस ! चिरकाल शठता न कर । श्री शिवजी को भज । वह कभी भी तुझे छोड़ेगा नहीं ॥१०॥

कथं न किल दृश्यते गरलकालकूटं गले ।
जहाति न च शंकरः कमपि यः प्रपन्नोऽस्ति तम् ॥
समीक्ष्य फणिभूषणं किमिति हन्त ! संशेरसे ।
मते ! त्वमपि धार्यसे व्रजसि चेदिमं शंकरम् ॥११॥

क्या देखतो नहीं है श्री शिवजी के गले में कालकूट ने भी स्थान पाया है । जो भी शरण आ जाय उसको शिवजी छोड़ते नहीं हैं । फणिभूषण ऐसे भगवान् को देखकर भी क्या संशय करती है । अरी बुद्धि ! तू यदि शरण जायगी तो शङ्कर तेरा भी स्वीकार करनेवाला है ॥११॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गृहेण च धनेन वा तव किमस्ति दारासुतैः ।
मते ! गृहधनादिकं त्यजसि किं न देहात्यये ॥
शरीरमपि यत्स्वकं तदपि नैव भिन्नैस्तु किम् ।
मृषैव खलु लुभ्यसि श्रय शिवं स्वरूपं शिवम् ॥

अरी बुद्धि ! घर द्वार, धन दौलत, पुत्र मित्र कलत्र आदि से तेरा क्या नाता है ? देह छूट जाता है तब ये सब क्या नहीं बलात् छूट जाते हैं ? बहुत क्या ! शरीर भी तब अपना नहीं रह जाता और चीजों की क्या कथा । अतः व्यर्थ ही लोभ करती है, अरी बुद्धि ! तू स्वस्वरूप शिवका आश्रय कर ॥ १२ ॥

मते बत न दृश्यते मृडपुरस्थनंदीश्वरः ।
शिवात्प्रथममर्च्यते किल तदाज्ञयाऽऽराधनम् ॥
यदि त्वमिह यास्यये ! शरणमस्य निःसंशया ।
तथैव खलु हे मते ! प्रथमपूजनं ते भवेत् ॥१३॥

अरी बुद्धि ! श्री शिवजी के सामने नंदीश्वर क्या दीखता नहीं, शिवजी की आज्ञा से वह प्रथम पूजा पाता है। उसी तरह तू यदि शरण जायगी तो निःसंशय तुझे भी प्रथम पूजन प्राप्त होगा ॥ १३ ॥

स एक इति माऽस्तु ते बत विलोक्य कीर्तिमुखम् ।
न चित्रमिदमप्यहो किल नरा असंख्या इमे ॥
शिवस्य भजनान्मते ! गुरव एव भूत्वाऽनिशम् ।
शिवात्प्रथममर्चिताः किमिह विस्मृतं तेऽधुना ॥१४॥

नंदीश्वर एक ही है ऐसा मत मान । कीर्ति मुख की भी प्रथम पूजा होती देख । यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देखो ये असंख्य नर शिवजी के अनिश भजन के कारण सद्गुरु बनकर शिवजी से भी प्रथम पूजित हो रहे हैं। क्या यह बात भूल गई ॥१४॥

स्वभक्तजनपूजनं प्रथममेव यद्भाव्यते ।
न कोऽपि खलु हे मते ! भवति संप्रदायस्तथा ॥
स्वतोऽपि हि यतोऽधिकं स्वजनगौरवं वांछ्यते ।
मते ! भज शिवं परं त्वमपि चेश्वरो जायसे ॥१५॥

अपने भक्तजनों का पूजन अपने से प्रथम ही हो ऐसा कोई सम्प्रदाय नहीं है। यह तो अपने से अपने भक्तजनों के गौरव को अधिक बढ़ाने की वाञ्छा से है। अरी बुद्धि ! तू भी शिवजी का भजन कर ! परमेश्वर हो जाएगी ॥ १५ ॥

श्रुतं किल मुहुस्त्वया तदपि नाम पूजाविधौ ।
द्विजैश्च परिपूजितो भजनतो हि खल्वंत्यजः ॥
ततोऽपि शिवतुल्यतः प्रथित ईश्वरश्चेत्यसौ ।
मते किमिति चिंत्यते बत वदामि 'चंडीश्वरः' ॥१६॥

वह नाम तूने पूजाविधियों में बार बार सुना होगा कि एक अन्त्यज भजन के कारण ब्राह्मणों से पूजा गया। इतना ही नहीं, वह तो शिवतुल्य होने से ईश्वर ही प्रसिद्ध हो गया। अरी बुद्धि ! वह कौन है ऐसा सोचती है ? बतलाता हूं। वह तो चण्डीश्वर है ॥१६॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समीक्ष्य च सुनश्वरं वसति स स्मशाने शिवः ।
सतामिति निदर्शयन्सकलवैभवं तन्मृषा ॥
मते ! जगत ईश्वरस्तदपि मुक्तसंगो ह्यसौ ।
वृथैव बत मुह्यसि श्रय परं शिवं शाश्वतम् ॥१७॥

जगत् को नश्वर देखकर श्री सदाशिव स्मशान में रहते हैं। इससे भगवान् सज्जनों को निदर्शन कर रहे हैं कि सकल वैभव नश्वर अतएव मिथ्या है। अरी बुद्धि! जगत् के ईश्वर होते हुए भी श्री शिवजी मुक्तसङ्ग हैं। व्यर्थ ही तू मोह कर रही है। शाश्वत श्री शिवजी का आश्रय कर! ॥१७॥

अशक्यमिति भावनां त्यज विभाव्यसे वा यदि ।
विरक्तमनुयाह्यये ! शिवमिमं न वै क्लिश्यसे ॥
यदा किमपि शक्यते न शरणं समर्थं व्रजेत् ।
समर्थशरणागतो यदि भवेन्न क्लिश्येत्पुनः ॥१८॥

परमार्थसाधन अपने से अशक्य है, ऐसी भावना छोड़ दें। यदि अशक्यता की भावना होती है तो विरक्त ऐसे श्री शिवजी की शरण जा। कोई क्लेश ही न होगा। जब कोई बात अशक्य मालुम पड़ती हो तब समर्थ की शरण जाना चाहिये। समर्थ के शरणागत को कभी किसी प्रकार क्लेश हो नहीं सकता। (छत्रपति शिवाजी के गुरु शिवावतारी समर्थ श्री रामदास 'समर्थ' कहे जाते हैं) ॥१८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न जातु शममेत्ययं मन इदं सुभोज्यादिना ।
न काम इह शाम्यति स्वयमहोऽस्य ह्यानाद्विना ॥
यथाग्निरधिको हुतः किल तथैव कामोऽप्ययम् ।
शिवस्य कृपया तवास्तु विरतिः स्वसौख्योदयः ॥१९॥

सुभोजन आदि के द्वारा यह मन कभी भी शम को प्राप्त कर नहीं सकता। काम कभी उपभोग से शान्त होनेवाले नहीं हैं। त्याग ही इनके शान्ति का उपाय है। जिस प्रकार अग्नि आहुति से बढ़ता ही जाता है उसी प्रकार काम की भी बात है। श्री शिव की कृपा से तुझे वैराग्य प्राप्त हो और स्वस्वरूप-आनन्द का उदय हो ॥१९॥

न देवनरराक्षसैः पशुपिशाचसिंहोरगैः ।
मते ! त्वमनुबध्यसे यदि तु यासि शैवं पदम् ॥
महेश्वर इति श्रुतौ सततविश्रुतोऽयं शिवः ।
न कोऽपि खलु तत्समःअथ पुनर्न भीस्त्वां स्पृशेत् ॥

देव, नर, राक्षस, पशु, पिशाच, सिंह, सर्प किसी से भी विघ्न नहीं होगा, अरी ! बुद्धि ! यदि तू शिवपद का आश्रय कर लेगी। वेद में श्रीशिवजी सदा महेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं। उनके समान कौन है ? कोई नहीं है। श्री शिवजी का तू आश्रय कर, तुझे भय छू नहीं सकता ॥२०॥

अनन्यशरणागतं न च जहात्ययं शंकरः ।
भवाब्धिरिति माऽस्तुभीर्भवति गोष्पदं यासि चेत् ॥
परं कुरु न कैतवं भव मते ! त्वनन्याश्रया ।
विलोभय न मामये कपटनाटकं तत्त्यज ॥२१॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनन्य शरणागत ऐसे को शङ्कर त्याग नहीं देता। भवसागर की गहराई से भीति न होनी चाहिये। शङ्कर की शरण जाने से वह गोपद हो जानेवाला है। किंतु छल कपट त्याग कर तू शङ्कर की अनन्याश्रित हो जा मुझे लुभा मत। तू अपने कपटनाटक को त्याग दे ॥२१॥

अनन्य इति यो भवेत्स न भजेद्विभिन्नाश्रयम् ।
जहीहि विषयस्पृहां व्रज मते ! शिवं शंकरम् ॥
विषादपि विनाशकं विषय एव दुष्टं विषम् ।
पपौ किल हलाहलं न च चकाङ्क्ष चान्यच्छिवः ॥२२॥

जो अनन्य होता है बाद में वह विषय आदि अन्य आश्रय को कभी नहीं भजता। अतः अरी बुद्धि ! विषयस्पृहा को त्याग सुखस्वरूपशङ्कर को भज ! विष की अपेक्षा विनाशकारी विषय ही दुष्ट विष है। श्री शिवजी ने हालाहल विष ही को पी लिया और किसी की इच्छा न की ॥२२॥

स्वभक्तजनमुक्तये प्रथितनिर्गुणोऽपि स्वयम् ।
सदाचरति हे मते ! स च न कर्मभिर्लिप्यते ॥
न तस्य कृतकेन वा किमपि लंभनीयं तथा ।
निजस्थितिमविस्मरन्खलु विराजते शंकरः ॥२३॥

स्वयं निर्गुण होते हुए भी श्री शिवजी भक्तजनों की मुक्ति के वास्ते सदाचरण का पालन करते हैं, तथापि कर्मों से लिप्त नहीं होते। उनको किसी कृति से कोई प्राप्तव्य नहीं है। सदा अविस्मृत स्वरूपस्थिति ऐसे शङ्करजी विराजते हैं ॥२३॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परार्थमिह जीवितं किल निदर्शयन्पावनः ।
पपौ सुमहदुज्ज्वलं विषमहो जगद्दाहकृत् ॥
बभूव न शिवादृते विषपिपासुरन्यो यतः ।
न कोऽपि शिववत्क्षमः परहिताय निः स्वार्थ्यये ॥

जगत् को भस्म करनेवाले विष को भी शङ्करजी ने पी लिया; इससे परम पावन शिवजी ने यह निदर्शन किया कि जीवित 'परार्थ के लिये है'। शिवजी के सिवा और कोई देव हालाहल विष का पान करने को सिद्ध न हुए। अतः पर हित करने में शिवजी के समान निःस्वार्थ दूसरा कोई समर्थ नहीं है ॥२४॥

हलाहलमपीदृशं विपरिदृश्य लब्धाश्रयम् ।
ययुर्विषधरा अमी शरणतां विहीनाश्रयाः ॥
स्वपादशरणागतान्स्वसमशीलयुक्तान् हि तान् ।
विलोक्य शमिता मते ! निजविभूषणायाद्रिताः ॥

हालाहल जैसे महाविष को भी शिवजी के यहाँ आश्रय मिला देखकर निराश्रित ऐसे विषधर नाग भी शङ्करजी के शरण गये। शङ्करजी ने उनको अपने चरण में शरणागत देखकर, मेरे समान ये भी विषधारणशील हैं ऐसा देख शिवजी ने उनको शांत कर अपना भूषण बनाया ॥२५॥

स्वपादशरणं गतान्निजमहिम्नि संस्थाप्य यत् ।
तदीयतनुभस्म नो त्यजति धारयत्येव तत् ॥
स्वभक्तजनभस्मना कृतमिदं स्थलं पावनम् ।
स्मशानवसतिः कृतेत्थमपि भावयित्वा मते ॥२६॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री शिवजी अपने चरणों में शरण आये हुए भक्तों को अपनी अतुल महिमा में स्थापित कर उनके शरीर भस्म को तक छोड़ते नहीं हैं; धारण करते ही हैं। अपने भक्तों के भस्म से यह स्थल पवित्र बना हुआ है। मानो इस भावना से भी शङ्कर ने स्मशान में अपना वास रखा है ॥२६॥

स्वभक्तशवभस्मना कृतपवित्रदेशोऽत्र याः।
निदग्धतनवस्तथापि किल पाविता पापिनाम्॥
विचिंत्य बत भस्म नो त्यजति तान्गणे स्थापयन्।
पिशाचपरिवारितो भवति भक्तलोभी शिवः ॥२७॥

अपने भक्तों के भस्म से पवित्रीकृत स्मशान में इनके भी शव का दाह हुआ है, इतने ही कारण से शङ्कर पापियों के भस्म को भी छोड़ते नहीं है। उन पापियों को भी पावन कर अपने गणों में स्थान दे भक्तलोभी शिव पिशाचपरिवारित होता है ॥२७॥

अतीव सरलप्रभुः स्वजनभावलुब्धो हरः।
गजस्य बत भस्म नोऽलभत कृत्तिवासोऽभवत्॥
न भावयति गौरवं स्ववपुषो न वा वैभवम्।
न पश्यति गुणागुणं स्वजनभक्तिलुब्धो मृडः ॥२८॥

महादेव प्रभु अत्यंत सरल हैं। स्वजनों के भावपर मुग्ध होते हैं गज का भस्म नहीं मिला उसकी कृत्ति अर्थात त्वचा ही को पहन कर 'कृत्तिवासा' कहलाये। वे बहुत ही भक्त-वत्सल हैं। वे न तो अपने देहगौरव की अपेक्षा करते और न अपने वैभव की ही परवाह करते हैं, न भक्तों के गुणागुण की ओर ही ध्यान देते हैं। बस! केवल भक्ति के वश हैं ॥२८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वभक्तिपरिपूरितं किल कपालमासीदिदम् ।
विचिंत्य परिनोदितोऽकुरुत भैक्ष्यपात्रं च तत् ॥
स्वभक्तकरपावितं स्वमतभैक्ष्यमश्नन्भुवि ।
मते ! त्रिभुवनाधिपश्चरति भक्तिभिक्षाश्यये ! ॥

जीवित समय अपनी भक्ति से यह कपाल परिपूरित था ऐसा सोच प्रभु ने उसको भिक्षापात्र बनाया। उसमें भक्तों के हाथ से पवित्र हुई अपनी प्रिय भिक्षा को ग्रहण करते हैं अरी बुद्धि ! इस प्रकार त्रिभुवनाधिपति प्रभु भक्तिभिक्षा का ग्रहण करते हुए विश्व में विचरते हैं ॥२९॥

न पुष्पमपि मौक्तिकं न च तथाहि रत्नान्यये ! ।
सुवर्णमपि नो तथा शिवगले प्रियं दृश्यते ॥
स्वनामजपतश्च यन्मुखमतीव पूतं मतम् ।
तदीयशुभमालिका शिवगले किलालंकृता ॥३०॥

शिवजी का गले में न पुष्पों की माला न मोतियों के हार, न रत्न, न सोने के आभूषण ही प्रिय हैं। किन्तु शिवनाम के जप से जिनके मुख अत्यन्त पवित्र हुए हैं ऐसी मुण्डमालिका ही शिवजी के गले का अलंकार है ॥३०॥

स्वभक्तजनरागभृत्तनुमिमं विदित्वा शिवम् ।
न किं शरणमेष्यये ! निजविमुक्तये शंकरम् ॥
किमत्र तव संशयः किल वृथैव संशेरसे ।
जहीहि भवबंधनं सुखघनं भवं ह्याश्रय ॥३१॥

इस प्रकार अपने भक्तों पर अत्यन्त वात्सल्यपूर्ण शिवजी को समझकर भी अरी बुद्धि ! तू अपनी मुक्ति के वास्ते उनकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शरण क्यों नहीं जाती ? इसमें तुझे क्या संदेह है। छोड़ भवबंधन को और सुखघन श्रीशिवजी का आश्रय कर ॥३१॥

स्वदर्शनसुधाक्षुधार्दितचकोरचंद्रः शिवः ।
भवार्तितपनार्दितस्वजनतापचंद्रः शिवः ॥
स्वभक्तिरसपूरितामलहृदब्धिचंद्रः शिवः ।
स्वपादवशवर्तिहृत्कुमुदहर्षचंद्रः शिवः ॥३२॥

शिवदर्शनरूपी सुधा के लिए पिपासु ऐसे भक्तचकोरों के शिवजी चंद्रस्वरूप हैं। भवदाहरूपी सूर्यसे पीड़ित स्वजनों के तापनिवारणार्थ श्रीशिवजी चंद्ररूप हैं। अपने भक्तिरस से पूरित ऐसे पवित्र हृदयरूपी समुद्र के लिये शिवजी चंद्ररूप हैं। अपने चरणों के वशवर्ती ऐसे हृदयकुमुदों के विकास के लिये शिवजी साक्षात् चंद्र हैं ॥३२॥

शिवः स्वजनकामधुग् भवसमुद्रतारोऽव्ययः ।
विरक्तजनमुक्तिभृत्सुरतरुः सुकल्पो महान् ॥
शिवः परिजनाटवीनववसंतसौख्योदयः ।
सुरम्यनिजभक्तहृद्वनपिकः शिवोऽज्ञानहृत् ॥३३॥

शिवजी भक्तजनों की कामना पूरण करनेवाले तथा उनको भवसागर से पार उतारनेवाले हैं और विरक्तों को मुक्ति देनेमें समर्थ महान् कल्पद्रुम हैं। भक्तरूपी अरण्य के लिये नववसंत के समान सौख्योदयकारी हैं। भक्तों के हृदयरूपी रम्य वन के शिवजी अज्ञानहर्ता पिक ही हैं ॥३३॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिवः सकलभूतभृन्मरणदुःखशान्तामृतम् ।
शिवः कुटिलदर्पकप्रबलदर्पदावानलः ॥
शिवः स्वजनमोहकृद्भवगजारिपंचाननः ।
भवान्ध्यविनिवर्तको दिनमणिः शिवः पावनः ॥३४॥

शिवजी सकल प्राणियों के भर्ता मरण दुःख के हर्ता अमृतरूप हैं। शिवजी कुटिल कामदेव के प्रबल दर्प को भस्म करनेवाले दावानलरूप हैं। भक्तों को मोह में डालनेवाले भवसागररूपी हाथी के लिये शिवजी पञ्चानन सिंह हैं। शिवजी भवांधकार के निवारक पावन सूर्य हैं ॥३४॥

त्रिशूलमिति यत्करे त्रिगुणदारणार्थं धृतम् ।
अयं डमरुनिःस्वनस्त्वमसि वक्ति भूमाऽद्वयः ॥
समीपवशवर्तिनी भवति सा च माया शिवा ।
विभेहि न मते ! भज त्वमिह मायिनं शंकरम् ॥३५॥

भोक्ता भोग भोग्य इस त्रिगुणरूप को नष्ट करने के लिये हाथ में शिवजी ने त्रिशूल धारण किया है। उनकी डमरूध्वनि 'तत्त्वमसि' अद्वितीय भूमा सच्चिदानंद तुम हो, का उपदेश दे रहा है। समीप में वश रहनेवाली माया ही शिवा अर्थात् देवी पार्वतीजी हैं। अरी बुद्धि ! डर मत ! तू मायेश्वर शङ्कर का सच्चा भजन कर ॥३५॥

सुशांतकमनीयरुग्वदति चंद्रमौलेर्मुहुः ।
वृणीष्व भवमुक्तये निजहिताय मृत्युञ्जयम् ॥
त्रिलोकजनपावनं स्रवति बोधगंगाजलम् ।
सुहासमुखशोभनं भवतु मुक्तये ते मते ! ॥३६॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चंद्रमौलि शङ्कर की शांत एवं सुंदर कांति बार बार कहती है कि भवसागर से मुक्तिरूप अपना हित साधने के लिये मृत्युञ्जय की शरण जा। शङ्कर के शिरोभागसे त्रिलोक-पावन बोधगङ्गाजल वहता रहता है। शङ्कर का शोभन मंद-हास अरी! बुद्धि! तेरी मुक्ति के लिये हो ॥३६॥

सुभस्मधृतमंगलं विगतमोहकामादिकम्।
सदैव सुसमाहितं सकलजीवनं मुक्तिदम्॥
सुधर्मवृषवाहने समुदितं शिवं पावनम्।
मते! स्तुहि भजस्व तं शुकसनत्कुमारैः स्तुतम्॥

भस्मधारण किये हुये मङ्गलमय, मोह, काम आदि से सर्वदा रहित, सदा समाधिस्थ, सकलजीवन, मुक्तिदाता, धर्मरूपी वृष पर आरूढ़ परमपावन श्रीशिवजी की, अरी बुद्धि! तू स्तुति कर। शुक सनकादि महर्षि सदा जिनकी स्तुति करते रहते हैं उन्हें भज ॥३७॥

तमोवृतनिशापतिर्निजगुरुप्रियां कामयन्।
स्वपापफललांछनादमृतरश्मिकृष्णाननः॥
प्रधीः खलु तथाप्यसौ शरणमेत्य मृत्युञ्जयम्।
स्वरक्षणमतः कृतं यदपि मृत्युदंष्ट्रांकितः॥३८॥

चंद्रमा ने मोहावृत होकर एक बार गुरुपत्नी की कामना की। उस पापफल से अमृतराशि होते हुए भी उसका मुख काला हो गया। तथापि उसको बुद्धि सूझी। वह मृत्युञ्जय की शरण गया। मृत्युञ्जय शङ्कर ने मृत्यु की दंष्ट्रा से उस चंद्रमा की भी रक्षा की है ॥३८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अयं स्वगुरुपत्निगो विधुरहो महापातकी ।
कथं च शिवरक्षितो बत कथं कृपाभूरपि ॥
न दंड्य इति चेद्विधुस्तदिह पापमाद्रीयते ।
न चिंतय मते ! कथं शृणु विधुस्तु संरक्षितः ॥

अरी बुद्धि ! तू यह मत सोच "कि गुरुपत्नीगामी चंद्रमा तो महापातकी है, तब शिवजी ने उसका रक्षण क्यों किया। वह चंद्रमा कृपापात्र कैसे हो सकता है ? वह तो दण्ड्य होना चाहिये था। उसके रक्षण से शिवजी ने पाप ही का आदर किया !" सुन वह चद्रमा कैसे रक्षित हुआ ॥३९॥

स्वपादशरणागतेर्यदभवत्सुपुण्यं महत् ।
तदेव वपुषो विधोः किल मते ! समादाय च ॥
तदीयमिति निर्ममे निरघबालरूपं मते ! ।
सुवीक्ष्य गतकल्मषं कृतमितः शिरोभूषणम् ॥४०॥

शङ्कर के चरणों में शरण जाने से जो महत् पुण्य उत्पन्न हुआ उसी पुण्य को शङ्कर ने चंद्रमा के शरीर से अलग कर उससे एक नई चंद्रकला बनाई। चंद्रमा का वह शुद्ध निष्पाप बालरूप देखकर उसको शङ्कर ने शिरोभूषण बनाया ॥४०॥

स्वभावपरिनिष्ठितः किल शिवोऽयमत्राप्ययं ! ।
समीक्ष्य शरणागतं विधुमतीव कालार्दितम् ॥
स्वपादनमनार्थमेवमिह चागतान्मृत्युतो ।
बिभेष्यति विचिंत्य नो निजनखे, ललाटेऽधरत् ॥

अरी बुद्धि ! काल के आतङ्क से ही तो चंद्र मेरी शरण आया है, अतः मेरे चरणों पर मस्तक नवाने के लिये ही आये

२

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यम से चंद्र कहीं डर न जाय यह सोचकर स्वभावविवश परमदयालु भोलेनाथ ने उसे अपने नख में न रख ललाट में स्थान दिया है ॥४१॥

स्वपापफलभागिनो ह्यनुभवन्ति दुःखं परम् ।
व्रजन्ति शरणं शिवं न च विमूढचेतोजनाः ॥
तवास्मि च वदन्ति ये सकृदपीह मृत्युंजयम् ।
अतीव किल पापिनोऽपि हि भवन्ति दत्ताभयाः ॥

अपने पाप के फल को भोगनेवाले कठिन दुःख का अनुभव करते हैं। पर वे मूढ जन श्रीशङ्कर की शरण नहीं जाते और जो एक बार भी 'शम्भो ! मैं तेरा हूं' कहते हैं, उन्हें यह दुःख भोगना नहीं पड़ता है। इस प्रकार मृत्युञ्जय की कृपा से अनेकों पापी अभय को प्राप्त हुए हैं ॥४२॥

यदा किल शिवाश्रितः कथमयं क्षयी चंद्रमाः ।
अदर्शनमपि स्फुटं ननु विभात्यमायां कथम् ॥
अतो न शरणागतौ किमपि तथ्यमेवं मते ! ।
विभावय न तत्र यद्भवति गूढतत्त्वं शृणु ॥४३॥

अरी बुद्धि ! तू ऐसी शङ्का न कर "कि यदि चन्द्रमा को शिवजी का आश्रय है तो यह अभी भी क्षयी कैसे ? फिर अमावास्या के दिन चन्द्रमा का लोप ही क्यों हो जाता है। अतः शरणागति में कुछ भी तथ्य नहीं है" इस विषय में बड़ा भारी गूढ़ रहस्य है। मैं बतलाता हूं, सुन ! ॥४३॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अयं हि गुरुतल्पगो गुरुसुदुष्टशापावृतः ।
क्षमार्हमपि नह्यघं गुरुवचोऽपि सत्यं भवेत् ॥
ममापि बिरुदावलिर्न च विकुण्ठिता स्यात्कदा ।
विचार्य च सिते पुनः खलु विजीवयत्यंशिनम् ॥

गुरुतल्पगामी होने से इसको गुरु का घोर शाप है। वह पाप भी अक्षम्य है। गुरु का वचन भी असत्य हो नहीं सकता। मेरी 'शरणागतवत्सल' विरुदावली को भी न्यूनता आ नहीं सकती। यह सोचकर भगवान् शङ्कर ने शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का पुनरुज्जीवन करना निश्चित किया ॥४४॥

स्वकर्मफलभोग्यसौ भवति कृष्णपक्षे क्षयी ।
शिवस्य शरणागतेः फलत एष शुक्ले नवः ॥
यदा विधुमदर्शनं गमयति त्वमायामघः ।
शिवेन परिजीवितः प्रतिकलं विधुश्चैधते ॥४५॥

चन्द्रमा कृष्णपक्ष में अपना कर्मफल भोगता है, क्षयी हो जाता है। अनन्तर शुक्लपक्ष में शिवजी की शरणागति के फल से नया हो जाता है। अमावस्या को जब चन्द्रमा अदृश्य हो जाता है तब शिवजी उसको पुनः उज्जीवित करते हैं, इस प्रकार चन्द्रमा एकैक कला से प्रतिदिन बढ़ने लगता है ॥४५॥

दिवः सुरनदीत्यवातरदहो ! महागर्विता ।
विचिंत्य मम वेगतः शिवशिरो नतं कारये ॥
न निर्गममितो मते ! भजति सा बताद्यापि हि ।
भगीरथनुतः शिवोऽतितनुधारयाऽमुंचत ॥४६॥

स्वर्गलोक से सुरनदी गङ्गाजी बड़े गर्व के साथ भूलोक पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उतरीं। उन्होंने सोचा कि मैं अपने वेग से शिवजी के सिर को झुका दूँगी। किन्तु उनका मनोरथ सिद्ध हो न सका। वहां से वे निकल भी न सकीं। जब जटा में गङ्गा समा गईं तब विचारे भगीरथ ने शिवजी की स्तुति की। उससे प्रसन्न होकर शिवजी ने छोटी सी गङ्गाजी की धारा बहाई ॥४६॥

अतो न कुरु कैतवं जहिहि दुष्टताऽहंकृती।
विना कपटनाटकं शरणमेहि मृत्युञ्जयम् ॥
न नामयितुमंतरेऽपि च यतस्व गर्वोद्धता।
न नामयितुमीश्वरं विधिरपीह शक्तो हरिः ॥४७॥

इसलिये अरी बुद्धि! छल कपट मत कर। दुष्टता अहंकारादि को त्याग दे। कपट नाटक के बिना ही मृत्युञ्जय शङ्कर की शरण जा। गर्व से उद्धत होकर बीच ही में भगवान् को झुकाने का प्रयत्न मत कर। ईश्वर श्रीशिवजी को नमाने के लिये न विधि ही शक्त है न हरि ही ॥४७॥

वराहतनुधृग्घरिर्विधिरपि स्वहंसासनः।
अपारशिवपारमेव बत मातुमेतौ मते! ॥
अधोर्ध्वमथ जग्मतुर्ममतुरेनमेवं नहि।
अधोर्ध्ववितत शिवं निरवधिं स्वसंकल्पतः ॥४८॥

अपार ऐसे शिवजी का अपने बल पर पार लगाने के लिये हरि ने वाराहरूप धारण किया और ब्रह्मा ने अपने हंस-वाहन पर सवारी की। नीचे की ओर हरि और ऊपर की ओर ब्रह्मा चल पड़े। तथापि अधः ऊर्ध्व सर्वत्र अपार विस्तृत निरवधि शिवतत्वका अपने संकल्प से पार न पा सकें ॥४८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अयं नहि दिगंबरः परिवृतोऽस्ति दारासुतैः ।
मते ! खलु शिवस्तथाऽक्रियत यत्सदारासुतैः ॥
न तत्सदृशपामरो किल भवेदयं शंकरः ।
विरक्तजनहृद्गते बत शिवे किमारोप्यते ॥४९॥

अरी ! दिगम्बर महादेव को पत्नी पुत्र आदि कोई नहीं है। यह तो पुत्रकलत्रादि प्रपञ्च में फंसे लोगों ने शिव को कुटुम्बियों से युक्त संसारी बनाया है। भला, सर्वमङ्गलकारी शङ्कर पामर गृहस्थ की तरह कहीं संसारी हो सकते हैं ? विरक्त जनों के ध्येय शिव को व्यर्थ ही ये गृहस्थ कुछ का कुछ बतलाते हैं ॥४९॥

स्वभक्तभवभंजनीं वहति यां स्वशक्तिं शिवः ।
इयं हि खलु पार्वती शृणु तदात्मजौ काविति ॥
विराग इति यः स वै षडरिनाशकः षण्मुखः ।
स्वभक्तजनमुक्तये गणपतिर्विवेकोऽपरः ॥५०॥

श्रीशिवजी अपने भक्तों के भवभय को नष्ट करनेवाली जिस शक्ति को धारण करते हैं वही शक्ति तो भगवती पार्वती हैं। अब शिवजी के दो पुत्र कौन हैं सुन ! काम क्रोध आदि षड्वैरियों का नाश करनेवाला जो वैराग्य है वही षण्मुख कार्तिकस्वामी प्रथम पुत्र हैं। द्वितीय पुत्र भक्तों को मुक्ति देनेवाला विवेक ही महागणपति हैं ॥५०॥

समेत्य शिवशंकरं निजपदे सुलीना सती ।
जहीहि बहुनश्वरं भवमथामृतं स्वीकुरु ॥
कथं मृगजलार्णवे विषयवैभवे मुह्यसि ।
कथं न तत ईश्वरे सुखघने मते ! मज्जसि ॥५१॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अरी बुद्धि ! तू शङ्कर को प्राप्त कर स्वस्वरूपमें लीन होकर इस वहुनश्वर संसार को छोड़ दे। अमृत अर्थात् शाश्वत का स्वीकार कर। मृगजल सदृश विषयवैभव में क्यों अज्ञान से फँसती है आनन्दघन उस ईश्वर में क्यों नहीं मग्न होती ? ॥५१॥

अनेकविधजन्मजां विषयवासनां त्वं जहि।
जनुर्मृतिपुरःसरं न च विभावनं त्वं कुरु॥
मते ! त्रिपुटिभावनं त्यज चिदात्मरूपे शिवे।
चिदेकरस ईश्वरे किल किमस्ति वृत्त्युद्गमः ॥५२॥

अनेक जन्मार्जित विषयवासनाओं को तू छोड़ दे। जन्म मरण की भावना तू मत कर। अरी बुद्धि ! चित्स्वरूप शिव में ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयात्मक त्रिपुटी की भावना को त्याग दे। चिदेकरस परमेश्वर में क्या वृत्ति का उद्गम हो सकता है ॥५२॥

सुदृश्यमपि दारुणं सततदुःखदं कश्मलम्।
सुनिंदितमिदं यतो जहिहि माऽस्तु संगोऽस्य ते॥
अपथ्यमहितं मलं विषयसेवनं जन्मदम्।
मते ! त्यज भजस्व शं शिवमहो सदा तृप्तिदम्॥

यह सुन्दर दृश्य भयंकर है, सतत दुःखद, मलिन एवं निन्दित है। अतः इसको छोड़। इसका सङ्ग तुझे न हो। विषयसेवन अपथ्य है, जन्म देनेवाला है। अतः हे बुद्धे ! उसको त्याग। मङ्गलमय शिवजी का भजन कर। वह सदा तृप्ति देनेवाला है ॥५३॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कथं व्रजति शून्यतामिति न चिंतनीयं त्वया ।
जगल्लयविनाशकृच्छिव इति श्रुतौ ख्यापितम् ॥
अनन्यगतिका सती भज सदा शिवं पावनम् ।
स्वभक्तभवनाशकृच्छिवमिमं न किं वेत्स्ययं ! ॥५४॥

यह दृश्य एकदम शून्य जैसा निवृत्त कैसे हो सकेगा ? इस प्रकार की चिन्ता तू न कर । शिवजी जगत् का लय संहार करनेवाले हैं ऐसा श्रुति कहती है। तू अनन्यगति होकर परम पावन शिव का भजन कर । क्या तू नहीं जानती है कि शिवजी अपने भक्त के भवसागर को सर्वथा नष्ट करनेवाले हैं ॥५४॥

अहं परमनामयं निजविभावनं ब्रह्मणः ।
मते ! सुखघनं न तज्जडतनौ कदाऽऽरोपय ॥
विमृश्य खलु पश्य तत्ततमिह स्वदीप्त्या स्वयम् ।
स्वमात्रमिह भाव्यतेऽहमिति पश्य सर्वैर्यतः ॥५५॥

सब देहों में संस्फुरित 'अहं' (मैं) यह दुःखादि व्याधि से रहित सुखघन परब्रह्म की ही स्मृति हैं। हे बुद्धे । इस जड़ तन में उस सुखघन का कभी ऐक्यारोप मत कर । विचार कर देख, सब में उसकी निजी दीप्ति व्याप्त है। अतः सभी लोग 'अहं' कहकर उस स्वस्वरूपमात्र परब्रह्म को निरूपित करते हैं ॥५५॥

न भोग्यमिति चिंतय स्थिररुचा स्वरूपं तनोः ।
स्त्रियः सुपुरुषस्य वा नरक एव देहोऽशुचिः ॥
अहं स्फुरति चेतनं शिवमथोन्नतं यत्तयोः ।
चिनुष्व रुचिरं न तज्जहि सुभुंक्ष्व भूम्नः सुखम् ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस शरीर का तारुण्य सौन्दर्य और भोग सब क्षणिक हैं। स्त्री अथवा पुरुष शरीर अशुचि नरक ही है। इनमें स्फुरित होने वाले 'अहं' इस अतिमङ्गल चित्स्वरूप सुन्दर शिवतत्त्व को चुन। उसको मत त्याग। इस सर्वश्रेष्ठ सर्वव्यापी अनन्त ब्रह्मानन्द का आस्वाद ले ॥५६॥

न यत्र खलु मायिकं स्पृशति नापि चाविद्यकम् ।
यदत्र विततादृयं विलसितं स्वभासैव तु ॥
सुखैकरसभूम्नि तत्सुविमले विलीना भव ।
मते ! परमनामयं शिवमिमं भजस्वाधुना ॥ ५७ ॥

जिस शिवतत्व को न कोई मायिक अथवा अविद्यक भाव स्पर्श कर नहीं सकता। जो सर्वत्र अद्वितीय, व्याप्त है। अपने प्रकाश से सबका प्रकाशक है। आनन्दैकरस ऐसे उस निर्मल भूमा शिवतत्व में विलीन हो जा। अरी बुद्धि ! परम अनामय शिवजी का अब भजन कर ! ॥५७॥

जुगुप्सितमतृप्तिदं परवशं क्षणं दुःखदम् ।
सुखं विषयजं ततोऽप्यरुचिरं शरीरं मलम् ॥
क्षयांतमिति जीवितं बहुविकारयुक्तं तथा ।
हृदिंद्रियमिति भ्रमः किमिह सौख्यदं हे मते ! ॥५८॥

अरी बुद्धि ! यह विषयसुख निन्दित है, कभी तृप्तिदायक हो नहीं सकता। वह परवश क्षणिक एवं दुःख देनेवाला ही है। उससे भी शरीर अति अरुचिर एवं मलिन है। जीवन अनेक विकारों से युक्त है। उसका मरण में अन्त निश्चित है। हृदय इन्द्रिय आदि भ्रमकल्पित हैं। इनमें क्या सुखकारी है, कुछ नहीं ॥५८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

असारमिह जीवितं यदि तु भोगदृष्टिस्तव
यदा विगतवासना त्वमसि दोषदृष्ट्या मुहुः ॥
यदा न खलु मन्यसे किमपि नामरूपात्मकम् ।
सुशान्तमतिनिर्मलं परसुखं तदा ध्यास्यसि ॥५९॥

संसार में वैषयिक जीवन असार है । अरी बुद्धि ! यदि तुझे भोगदृष्टि है तो विषयों में दोषदर्शन के द्वारा प्रथम तू वासना रहित अपने को बना ले । जब तू नामरूपात्मक कोई वस्तु ध्यान में न लायगी तब तुझे सुशान्त निर्मल परम सुख ध्यान में आएगा ॥५९॥

आदौ त्वं दोषदृष्ट्या त्यज सुखमिह यत्प्राप्यते जन्मनैव
पश्चान्मन्यस्व सौख्यं निरवधिरचलं जन्मना नो शिवं यत्
भिन्नं यस्मान्न किंचित्तदमलविभवं प्राप्य भेदं जहीहि
नित्यानंदे शिवेऽस्मिन्निह हि किलमते! राजसे निर्विकल्पा

सर्वप्रथम तू जन्म के द्वारा ही प्राप्त होनेवाले जो सांसारिक सुख हैं, उनमें दोषदर्शन के उपाय से उनका त्याग कर । ततः पर निरवधि एवं अचल सौख्य, जो जन्म के द्वारा प्राप्त होनेवाला नहीं है ऐसे शिवस्वरूप को ही सत्यसुख मान । जिस शिवतत्व से कोई चीज भिन्न नहीं है ऐसे अमलवैभवयुक्त शिवतत्व को प्राप्त कर भेदभावना को त्याग दे । तब अरी बुद्धि ! नित्यानन्द ऐसे शिवतत्व में निर्विकल्प होकर तू विराजमान होगी ॥६०॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यो नम उपविशद्भ्यो नम इति ।
नमस्तिष्ठद्भ्यो वै नम इति च धावद्भ्य इह तु ॥
सदा सर्वेभ्योऽहं नम इति गृणन्हे पशुपते ! ।
नमस्कुर्वे तुभ्यं सकलजगदाकारवपुषे ॥ ६१ ॥

हे पशुपते ! "तेरे सोते जागते, उठते बैठते, दौड़ते खड़े, सारे विश्वरूप को सदा नमस्कार" इस प्रकार तेरी स्तुति करते हुए सकल जगदाकार तुझको नमस्कार करता हूं ॥६१॥

न जानेऽहं स्तोतुं तदपि न च जाने विलपनम् ।
न तेऽर्चां हे शंभो ! नच खलु तथा सेचनविधिम् ॥
न मंत्रं नो तंत्रं श्रुतिमपि तथा नो स्मृतिमपि ।
परं जाने त्वां भोः परमकरुणावारिधिरिति ॥६२॥

हे भगवन् ! मैं स्तुति करना नहीं जानता न प्रेम भरे आंसू बहा सिसक सिसक कर रोना ही जानता हूं। तेरी अर्चा पूजा अभिषेक आदि की विधि भी मुझे मालूम नहीं है। न तन्त्र-मन्त्र, श्रुति-स्मृति का ही मुझे ज्ञान है। केवल इतना जानता हूं कि तू परम करुणासागर है ॥६२॥

अहं हीनो दीनो विषयविषदावानलधृतः ।
त्रितापज्वालाभिस्त्वनिशमिह दग्धोऽस्मि विकलः ॥
न मोक्तुं वीक्षेऽहं कमपि सुलभोपायमधुना ।
शरण्यो विश्वेशस्त्विति जगति विश्वस्य च दृढः ॥

हे शम्भो ! दीन हीन मैं विषतुल्य विषयदावानल से घिरा हुआ तापत्रय की ज्वालाओं से सतत जलते रहने के कारण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अतिविकल हूं। मुक्ति के लिये कोई भी सुलभ उपाय मुझे नहीं सूझता। इस समय संसार में एकमात्र विश्वनाथ ही शरण हैं ऐसा विश्वास कर दृढ हूं ॥६३॥

न च स्त्रीकामोऽहं द्रविणमपि नेहे न तनयम् ।
न मे वांछा भोगे नच किल तथेहेऽमरवपुः ॥
न दीर्घायुष्यं वा बलमपि न शौर्यं न विजयम् ।
न विद्यां हे शंभो ! सकलमपि जाने न सुखदम् ॥

हे प्रभो ! मुझे स्त्री, पुत्र, धन, विविध उपभोग, अमर शरीर, दीर्घायु, बल, शौर्य, विजय, विद्या आदि कुछ भी नहीं चाहिये। क्योंकि मैं जानता हूं कि ये सब सत्य सुख को देने वाले नहीं हैं ॥६४॥

विवेकप्राबल्यात्किमपि न च मां प्रीणयति भो ।
न वैंद्रं ब्राह्मं वा किमुत नरलोकाधिपपदम् ॥
परं त्वेषा बुद्धिर्बत मृगजलप्रायविषयान् ।
बहून्मत्वा शंभो ! त्यजति परमानंदपदवीम् ॥६५॥

हे शम्भो ! प्रखर नित्यानित्यवस्तुविवेक के कारण इन्द्र और विधि के पद भी मुझे नहीं जंचते। इस तुच्छ नृपतिपद की बात ही क्या है ! पर यह बुद्धि मृगजल सदृश इन विषयों को सब कुछ मान परमानन्दपद को ही खो देती है ॥६५॥

न याचे साम्राज्यं विधिहरहरींद्रादिपदवीम् ।
किलोपाध्यानंदं विषयविभवं नश्वरमिमम् ॥
परं त्वेषा बुद्धिः सहजपरमानंदभरिता ।
सदा स्यात्त्वां याचे सततमिति यावत्सफलताम् ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं न साम्राज्य न विधि, हरि, हर, इन्द्र आदि की पदवी ही मांगता हूं, न विषय से उत्पन्न नश्वर औपाधिक आनन्द की ही मैं अपेक्षा करता हूं। मेरी एक ही याचना है कि हे प्रभो ! यह बुद्धि सफलता प्राप्त होने तक सतत परमानन्द में मग्न रहे ॥६६॥

यदन्यत्तज्जन्यं न च किल तदाप्तिः प्रियतमा ।
न यज्जन्यं शंभो ! तदिह निजरूपं ह्यभिलषे ॥
अपाकृत्य त्वं मे सकलमिदमज्ञानजनितम् ।
कदाऽऽविर्भूत्वा भोरमृतवचनैर्बोधयसि माम् ॥

परमानन्द स्वरूप से अन्य सब कुछ जन्य तथा नश्वर है। इसकी प्राप्ति प्रिय नहीं हो सकती। जो जन्य नहीं है ऐसे निज-स्वरूप की ही मैं इच्छा करता हूं। अज्ञानकार्य को (विषय-वासना को) दूर कर हे प्रभो ! तुम प्रकट होकर अमृतवचनों से मुझे कब बोध करा दोगे ? ॥६७॥

अनुस्यूते त्वय्यद्वयपरमतत्त्वे चिति शिवे ।
जगज्जीवेशाश्च प्रकृतिपुरुषौ स्त्री च पुरुषः ॥
नरो देवस्तिर्यग् विविधविषयज्ञानमिति यत् ।
प्रभो ! रज्वां सर्पभ्रम इव भवेदज्ञमतितः ॥

जिस प्रकार रज्जु में सर्प का भ्रम होता है उसी प्रकार हे शिव ! सर्व पदार्थों में अखण्डरूप से विद्यमान अद्वितीय चिद्रूप परमतत्व तुममें अज्ञान से यह जगत्, जीव, ईश, प्रकृति, पुरुष, नर, नारी, मनुष्य, देव, पशु, पक्षी आदि विविध विषय कल्पित हैं ॥६८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जय सच्चिदनंतशाश्वत जय देव ! दयांबुधे ! प्रभो ।
जय सर्वजनार्तिभंजन ! जय सर्वजनैकपावन ! ॥

हे शाश्वत अनन्त सच्चिदानन्द रूप ! आपकी जय हो ! हे दयासागर ! हे समस्तजनकष्टनिवारक सबको पावन करने-वाले प्रभो ! आपकी जय हो ! जय हो !! जय हो !!! ॥६९॥

तव शुद्धपदे निजात्मके मम बुद्धिमिमां दृढां कुरु ।
शिव ! नाशय भेदकल्पनां बहुपीडित एवमर्थये ॥

तुम्हारे शुद्ध पद में—स्वस्वरूप में मेरी इस बुद्धि को दृढ़ करो। हे शिव ! भेद कल्पना का नाश करो। मुझ बहुदुःख-पीड़ित की यह प्रार्थना है ॥७०॥

जय शंकर! पाशमोचन! जय विश्वतमोविनाशन ! ।
जय जीवपरैक्यबोधन ! जय मंगलशुद्धचिद्घन ! ॥

हे भवपाश से मुक्त करने वाले ! हे विश्व के तम का विनाश करने वाले ! हे जीव और परब्रह्म का ऐक्य बोधन करने वाले ! मङ्गलमय शुद्ध चैतन्यघन ! परमेश्वर ! तुम्हारी जय हो ! जय हो ! जय हो ! ॥७१॥

मम बुद्धिमतीव निर्मलां कुरु चात्मपदाप्तये शिव ! ।
शरणं करवाणि हे प्रभो ! दुरितादिह मां विमोचय ॥

हे शिव ! मेरी बुद्धि को आत्मपदप्राप्ति के लिये अत्यन्त निर्मल कर दो। हे प्रभो ! मैं तुम्हारी शरण आया हूं। मुझे पापों से छुड़ाओ ॥७२॥

मदनांतक! भक्तपालक! शशिशेखर! पाहि मां मृड! ।
शिव! सूर्य इवात्मतेजसा हृदयांध्यमपाकुरुष्व मे ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हे मदनान्तक ! भक्तपालक ! चन्द्रशेखर ! शम्भो ! मेरा रक्षण करो । हे शिव ! सूर्य के समान अपने तेज से मेरे हृदय के अन्धकार को दूर करो । ॥७३॥

तव भक्त्यरुणोदयो यदि स्वयमेव तवोदयो भवेत् ।
तव भक्तिमनिंदितां परां दयया जगदीश ! देहि मे ॥

हे जगदीश ! तुम्हारी भक्ति का अरुणोदय यदि मुझमें हो गया तो स्वयमेव तुम्हारा उदय होगा ही । अतः कृपा कर तुम्हारी अनिन्दित परा भक्ति मुझे दो । ॥७४॥

स्वजनेप्सितपूर्णकृद्भुवि विमला तव कीर्तिरीदृशी ।
तव दर्शनमीप्सितं मम विफलं मृड ! मा कुरुष्व भोः ॥

'शङ्करजी भक्तजनों की कामना की पूर्ति करनेवाले हैं' इस प्रकार तुम्हारी निर्मल कीर्ति प्रख्यात है । अतः हे प्रभो ! मेरी कामना तुम्हारे दर्शन की है । उस को तुम विफल होने न दो ॥७५॥

मुनयो गमिताः कृतार्थतां परिपश्य तया दृशा हि माम् ।
भवभीमभयार्दितस्य मे भव भो ! भवभीतिहारकः ॥

जिस कृपाकटाक्ष से मुनिगण कृतार्थ किये गये उसी कृपा-दृष्टि से मेरी ओर देखो ! संसार की बड़ी भीति से मैं पीड़ित हूं । हे भगवन् ! मेरी भीति हरण करो ! ॥७६॥

भव एव भवान्भवान्तकः कुरुतामभयं दयांबुधे ! ।
विषयामिषमोहनैरलं सकलेश ! परीक्षितं किल ।७७।

तुम्हारा नाम भव है तथापि भवसागर का अन्त करनेवाले हो । हे दयासागर ! मुझे अभय दो । अब विषयों का प्रलोभन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बहुत हो चुका। हे सर्वेश्वर! तुमने इस बात की बहुत बार परीक्षा करके देख ली है। ॥७७॥

समरूपबलान्वितस्य चेत् कृतमप्युचितं परीक्षणम्।
मरणोन्मुखसंगरेण किं शिव! शौर्यमिदं प्रशस्यते॥

रूप और बल में जो समान हो उसके बल की परीक्षा करना उचित है। मरणोन्मुख दुर्बल के साथ युद्ध में क्या पौरुष की प्रशंसा होगी? ॥७८॥

बहवः खलु पाविताः प्रभोरमृतैस्तव वीक्षणैर्भृशम्।
करुणाकर! मां पुनीहि भो दयया तव किन्न वा भवेत्॥

प्रभु की अमृतमय दृष्टि से कितने ही भक्तजन पवित्र हो गये हैं। हे करुणाकर! मुझे भी पवित्र करो। तुम्हारी दया से क्या न हो सकेगा? ॥७९॥

शिव सर्वगताद्वय प्रभो! क्व नु तिष्ठसि दर्शनं न ते॥
किल तत्त्वमसि श्रुतिर्जगौ किमहं शिव! हेय ईदृशः॥

हे सर्वगत, अद्वितीय, प्रभो, शिव! कहां हो? तुम्हारा दर्शन नहीं हो रहा है। श्रुति 'तत्त्वमसि' ऐसा कहती है। जब जीव शिवरूप है तब हे शिव! मैं तुम्हारे लिये हेय कैसे हूं? ॥८०॥

यदि मामशुचिं हि मन्यसे तनुरेव बताशुचि प्रभोः।
कृतिहेतुरहं यदि प्रभो! कृतिहेतुरियं हि वासना॥

तुम मुझे यदि अशुचि समझते हो तो प्रभो! यह तन ही अशुचि है। यदि कहा जाय कि मैं ही कर्म का करनेवाला हूं तो कर्म का कारण वासना ही है॥८१॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन एव हि वासनात्मकं मम संग इहास्ति न क्वचित्
तव रूपमहं सनातनं तव चैक्यमतः प्रकांक्ष्यते ॥

वासना भी तो मेरी ही है ऐसा यदि माना जाय तो वासना का कारण मन है। मैं असंग होने के कारण इनका मुझे कहीं संग नहीं है। मैं तुम्हारा ही सनातन ब्रह्मरूप हूं अतः ब्रह्मैक्य चाहता हूं ॥८२॥

अहमेवमिह त्वमेव हि न च पाप इति स्वभावतः।
अपि केन च भाम्युपाधिना विमलं कुरु मां दयानिधे ! ॥

जब मैं तेरा ही स्वरूप हूं तो मैं स्वभावतः पापी हो ही नहीं सकता। यदि किसी उपाधि द्वारा मैं पापी दिखाई दे रहा हूं तो उस उपाधि को नष्ट कर मुझे परिशुद्ध बना लो ॥८३॥

यदि मामिह नोद्धरिष्यसि तव कीर्तिरतो विनंक्ष्यति
तव शंकरनाम चेदृशं दयया किल पाहि मां शिव ! ॥

हे प्रभो ! यदि तुम मेरा उद्धार न करोगे तो तुम्हारी कीर्ति की ही हानि हो जायगी। तुम्हारा नाम ही शङ्कर अर्थात् मङ्गल करनेवाला है। कृपाकर मेरी रक्षा करो ॥८४॥

अपि दुष्टमतिस्तथापि भोः कृतवान्यदि चाटुसंस्तुतिम् ।
तमपि स्वजनं ह्यमन्यथाः किमहं किल हेय ईश्वर ! ॥

कोई दुष्ट बुद्धि तुम्हारे मुख पर यदि प्रिय स्तुति कर दे तो उसको भी तुम अपना लेते हो। तब प्रभो ! क्या मैं उन राक्षसों से भी निकृष्ट हूं ? ॥८५॥

तव भूमपदं निरापदं सुखमेव यदद्वयं विभो ! ।
मम चात्मपदं विचिंत्य तत् स्तवनं तव भोस्तदाप्तये ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम्हारा ब्रह्मरूप निरापद है जो अद्वितीय आनन्दघन है। हे विभो! मेरा आत्मपद भी वही है ऐसा जानकर उसीकी प्राप्ति के लिये यह स्तुति है ॥८६॥

अविकृतपदमीदृशं सदा त्विह कष्टं वचनादृते न ते।
कठिनं न च याचनं मम वचनं भवनुत्तवार्थ्यते ॥

सदा एकरूप रहनेवाला तुम्हारा पद नित्य अविकारी है। मेरे विषय में केवल वचन के उच्चारण बिना आपको कोई कष्ट है ही नहीं। मेरी याचना ऐसी कोई कठिन नहीं है। संसार पार होने के लिए आपके वचनामृत की ही एक अपेक्षा है ॥ ८७ ॥

अपि वेद्मि तथापि शंकर! गुरुतो दृढतामुपैम्यहम्
नहि शब्दविदाप्यते क्वचित्दृढताऽतइतोऽर्थ्यतेऽनिशम्

केवल शास्त्र के द्वारा जानने पर भी गुरु के उपदेश से ही दृढ़ता प्राप्त होती है। केवल शाब्दिक ज्ञाता तत्त्व को अपरोक्ष भाव से प्राप्त नहीं कर सकता। अतः तुम्हारी कृपा के लिये अनिश मेरी प्रार्थना है ॥८८॥

शशिशेखर! भूषणान्वितं गुरुरूपमिदं तव प्रभो!।
मम दृष्टिपथे विराजतामभयस्वकराब्जशोभया ॥

हे शशिशेखर! अखिल दिव्य भूषणों से युक्त तुम्हारा यह गुरुरूप अपने अभय करकमल की शोभा से युक्त होकर मेरे दृष्टिपथ पर सदा विराजमान रहे ॥ ८९ ॥

हृदयं विदितं ममेदृशं करुणाघन! शंकसे कथम्।
छलनं न च युक्तमीदृशं किल माऽस्तु विनोद इत्यपि

हे करुणाघन! मेरा हृदय तुमको विदित होने पर भी पुनः

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुनः शंकित क्यों होते हो ? इस प्रकार छल करना तुमको युक्त नहीं होता । विनोद की दृष्टि से भी तुम ऐसा आचरण न करो ॥ ९० ॥

अभयान्वितहस्तयुक्शिरः श्रुततत्त्वमसीतिभावनः
तव शुद्धपदे स्थिरोऽभयो भविताऽस्मि कदा वद प्रभो !

हे प्रभो ! तुम्हारे अभय हस्त को अपने मस्तक पर धारण कर, तुमसे 'तत्त्वमसि' महावाक्य का उपदेश सुन कर, स्वरूप में स्थित हो मैं उस शुद्ध पद में कब अभय होकर अचल होऊँगा ॥ ९१ ॥

शिव ! मातुरपि स्वभावतो हृदयं बहुलं च ते मृदु ।
स्वयमेव किल द्रवेद्यदा किमुत स्तवनेन शंकर ! ॥

हे शिव ! माता की अपेक्षा भी तुम्हारा हृदय स्वभावतः अत्यन्त मृदु है, जो विना प्रार्थना के ही द्रवित होता है । तो हे दयासागर ! मेरे स्तुति करने पर तो कहना ही क्या है, निश्चित ही द्रवित होगा ॥ ९२ ॥

कृपया मम मस्तके सकृत् शिव ! तेऽभयहस्तमेव भोः ।
सुविधाय दयां कुरु प्रभो ! खलु तत्त्वमसीति बोधय ॥

हे शिव ! कृपया मेरे मस्तक पर एक बार अपना अभयहस्त रख मुझे प्रेम से 'तत्त्वमसि' महावाक्य का उपदेश करो ॥९३॥

यदि मामुपदिश्यसि स्वयं कृपया तव सिद्ध ईदृशः ।
भवतप्तजनार्थमप्यहं भविताऽमृतरूप एव हि ॥

यदि मुझको स्वयं तुम उपदेश करोगे तो तुम्हारी कृपा से इस प्रकार सिद्ध हो जाऊँगा कि तब भवजाल से संतप्त जनों के लिए मैं ही अमृतरूप हो जाऊँगा ॥ ९४ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अगुणं सगुणं सदाशिव ! तव रूपमनुत्तमं किल ।
कृपया जगदीश ! दर्शय चरणं शरणं हि मे गतिः ॥

हे शिव ! आपके सर्वोत्कृष्ट सगुण निर्गुण दोनों ही रूपों को कृपया दिखलाइये । हे जगदीश ! मेरे लिये तुम्हारे चरणकमलों में शरण होना ही एक तरणोपाय है ॥ ९५ ॥

तटिनी क्व विहाय सागरं शिव ! गच्छति भिन्नमास्पदम्
रविरश्मिवदेव हे प्रभो ! किल तिष्ठति योग आवयोः ॥

हे शिव ! नदी को समुद्र छोड़ और कौनसा स्थान रहता है, सूर्य और सूर्यकिरण के सदृश मेरा आपका संबंध है ॥९६॥

नमस्ते भावगम्याय नमस्ते नतबन्धवे ।
नमस्ते ज्ञानसूर्याय नमस्तेऽज्ञाननाशिने ॥९७॥

केवल भक्तिभाव से ही प्राप्त होनेवाले हे प्रणतबंधु ! आपको मेरा नमस्कार है । अज्ञानांधकार को नष्ट करनेवाले हे ज्ञानसूर्य ! आपको मेरा वार-वार नमस्कार है ॥ ९७ ॥

भक्ताभिमानिने तुभ्यं नमः शर्वाय शंभवे ।
भक्तारिष्टविनाशाय शूलिने शृंगिणे नमः ॥९८॥

भक्तों पर अभिमान कर भक्तों के सकल अरिष्ट को दूर करनेवाले हे त्रिशूलशृंगधारी महादेव ! आपको वार-वार नमस्कार है ॥ ९८ ॥

नमः शांताय शुद्धाय निरालंबाय तेजसे ।
नमः प्रकृतिभद्राय शिवाय च नमो नमः ॥९९॥

नितांत शांत, परम पवित्र, निरालम्ब, स्वयंप्रकाश, हे नित्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मंगलशील वाले सदाशिव ! आपको मेरा वार-वार नमस्कार है ॥ ९९ ॥

विश्वस्रष्ट्रे नमस्तुभ्यं विधिरूपेण शंकर ! ।
विश्वपालनकर्त्रे च नमस्ते विष्णवे शिव ! ॥१००॥

ब्रह्माजी के रूप से विश्वसर्जन करनेवाले हे शंकर ! आपको मेरा नमस्कार है। विष्णु के रूप से अखिल ब्रह्मांड का पालन करनेवाले महादेव ! मैं आपको नमस्कार करता हूं ॥१००॥

सृष्टिसंहारकर्त्रे च रुद्ररूपाय ते नमः ।
मूर्तित्रयस्वरूपाय चैकायेवाद्वयाय ते ॥१०१॥

रुद्ररूप से सृष्टि का उपसंहार करनेवाले महाकाल ! आपको मेरा वार-वार नमस्कार है ! त्रिमूर्तिरूप एकमेवाद्वितीय आपको हे शंकर ! मेरी अनेक वंदनाएँ हैं ॥ १०१ ॥

नमः प्रकृतिरूपाय नमः पुरुषरूपिणे ।
प्रकृतिपूरुषहीनाय नमो ब्रह्मस्वरूपिणे ॥१०२॥

हे प्रभो ! प्रकृतिरूप आपको नमस्कार है, पुरुषरूप आपको नमस्कार है, प्रकृतिपुरुषातीत आपको नमस्कार है ॥१०२॥

नमस्ते नररूपाय नमः स्त्रीरूपधारिणे ।
पुंस्त्रीभावविशून्याय निर्विकल्पाय ते नमः ॥

पुरुषरूप आपको नमस्कार है, स्त्रीरूप आपको नमस्कार है, स्त्रीपुरुषभावातीत निर्विकल्पस्वरूप आपको नमस्कार है ॥ १०३ ॥

विश्वाय विश्वनाथाय विश्वांतर्वर्तिने नमः ।
व्याप्यव्यापकहीनाय विश्वातीताय ते नमः ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विश्वव्यापक, विश्वरूप, विश्वान्तर्यामी, विश्वनाथ ! आपको नमस्कार है। व्याप्यव्यापकभावशून्य विश्वातीत आपको नमस्कार है ॥ १०४ ॥

सृष्टिशून्याय सृष्टाय सृष्टिस्थित्यंतकारिणे ।
सृष्टिस्थितिविनाशाय नमो नित्याविकारिणे ॥

उत्पत्तिशून्य होने पर भी उत्पन्न होनेवाले, सृष्टि, स्थिति और उसका अन्त करनेवाले होकर भी सृष्टिस्थितिनाश-स्वरूप आपको हे नित्य अविकारी प्रभो ! बार-बार नमस्कार है ॥ १०५ ॥

सर्वाय सर्वहीनाय सर्वभूतनिवासिने ।
सर्वातीताय शुद्धाय नमस्ते शंकराय च ॥१०६॥

सर्वात्मक, सर्वहीन, सर्वभूतनिवासी, सर्वातीत ऐसे शुद्ध-रूप शङ्कर को नमस्कार है ॥ १०६ ॥

सर्वकर्त्रे नमस्तुभ्यं निष्क्रियाय चिदात्मने ।
सर्वभर्त्रे नमस्तुभ्यं नित्यासंगस्वरूपिणे ॥१०७॥

सर्वकर्त्ता तथापि निष्क्रिय चैतन्यस्वरूप आपको नमस्कार है। सर्वभर्त्ता तथापि नित्य असंगरूप आपको नमस्कार है ॥१०७॥

सर्वहन्त्रे नमस्तुभ्यं सर्वजीवनरूपिणे ।
सुखैकघनरूपाय पशूनां पतये नमः ॥१०८॥

सर्वसंहारकर्त्ता, सर्वजीवनरूप, सदानन्दघन पशुपते ! आपको नमस्कार है ॥ १०८ ॥

धामत्रयस्वरूपाय धामत्रयविनाशिने ।
त्रिधामसाक्षिणे तुभ्यं सत्तामात्राय ते नमः ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों धामों के स्वरूप, इन तीनों धामों के निवारक तथा तीनों के साक्षी सत्तामात्रस्वरूप आपको नमस्कार है ॥ १०९ ॥

शब्दाय शब्दगम्याय शब्दातीताय ते नमः ।
नमो निःशब्दरूपाय केवलब्रह्मरूपिणे ॥११०॥

शब्दस्वरूप, शब्द से (वेद से) गम्य होनेवाले, शब्दातीत तथा निःशब्द ब्रह्मरूप आपको नमस्कार है ॥ ११० ॥

ॐकारसाक्षिणे तुभ्यं ॐकारातीतरूपिणे ।
ॐकारवाच्यहीनाय नम ॐकाररूपिणे ॥

ॐकार के साक्षी, ॐकारातीतरूप, ॐकारवाच्य से रहित तथापि ॐकाररूपी आपको नमस्कार है ॥ १११ ॥

वेददात्रे नमस्तुभ्यं वेदगूढार्थबोधिने ।
वेदाय वेदवेद्याय वेदज्ञाय नमो नमः ॥११२॥

ब्रह्मदेव को वेदों का उपदेश देनेवाले, वेदों के गूढार्थबोधन करनेवाले, वेदस्वरूप, वेदवेद्य तथा वेदज्ञ ऐसे आपको नमस्कार है ॥ ११२ ॥

गुणकारणरूपाय सगुणाय गुणात्मने ।
गुणत्रयविनाशाय गुणातीताय ते नमः ॥११३॥

गुणों के कारण, सगुणस्वरूप, गुणात्मक, गुणत्रयविनाशक, गुणातीत ऐसे आपको नमस्कार है ॥ ११३ ॥

नमो मायास्वरूपाय मायातीताय मायिने ।
मायामोहविनाशाय मायासृष्टिकराय च ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माया, मायातीत, मायामोह का नाश करनेवाले, माया का निर्माण करनेवाले ऐसे आपको नमस्कार है ॥ ११४ ॥

कार्यकारणरूपाय कार्यकारणहेतवे ।
कार्यकारणशून्याय सर्वाश्चर्याय ते नमः ॥११५॥

कार्यकारणरूप, कार्य कारण दोनों के कारणीभूत, तथापि कार्यकारणभाव से अतीत सब प्रकार से अद्भुतरूप आपको नमस्कार है ॥ ११५ ॥

मायासंसर्गतश्चेशः शबलो मायया युतः ।
अविद्यावशतो जीवः रूपत्रयमिदं तव ॥११६॥

हे शिव ! माया के संबंध से ईश, माया से युक्त शबल-ब्रह्म और अविद्या के परवश होकर जीव कहलाते हैं। ये तीनों रूप आपके हैं ॥ ११६ ॥

मायीति त्वां श्रुतिब्रूते माया प्रकृतिरुच्यते ।
'अस्यावयवभूतैस्तु' व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ॥११७॥

श्रुति आपको मायी कहती है। माया प्रकृति है। मायी के अवयवों से यह जगत् व्याप्त है ॥ ११७ ॥

विद्या प्रकृतिरज्ञानन्तपो मृत्युरसत्तमः ।
तुच्छं माया प्रधानं च मूलाविद्येति या श्रुता ॥

विद्या, प्रकृति, अज्ञान, तप, मृत्यु, असत्, तम, तुच्छ, माया, प्रधान, मूलाविद्या इत्यादि नामों से जो विश्रुत है ॥११८॥

सा तवैतस्य संस्रष्टुः शक्तिः सदसदात्मिका ।
अनिर्वाच्येति विख्याता ययेदं सृजसि प्रभो ! ॥

हे प्रभो ! वही सदसदात्मक अतएव अनिर्वाच्या कहलाने-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाली आपकी शक्ति है जिसके द्वारा आप इस जगत् की सृष्टि आदि करते हैं ॥ ११६ ॥

यथैकौ पवनस्पंदौ नाम्ना भिन्नौ न सत्तया ।
त्वत्तो न तव शक्तिश्च भिन्नेयं किल विद्यते ॥

जिस प्रकार पवन (वायु) और स्पन्द ये दो नाममात्र हैं, वस्तुतः एक ही है। उसी प्रकार आप और आपकी शक्ति भिन्न नहीं है ॥ १२० ॥

अचिंत्यरचनाशक्तिस्तव माया महेश्वर ! ।
विस्मयैकशरीरा सा दुस्तर्क्या भवति प्रभो ! ॥

हे महेश्वर ! माया आपकी अचिन्त्य रचनाशक्ति है। हे प्रभो ! अद्भुतस्वरूप उस माया का कोई तर्क से पार पा नहीं सकता ॥ १२१ ॥

योगेन त्वं सृष्टिविधौ द्विधारूपोऽसि शंकर ! ।
पुरुषो दक्षिणांगेन प्रकृतिर्वामभागतः ॥१२२॥
द्विधा विभज्य चात्मानं त्वमेवार्धेन पूरुषः ।
त्वमेवार्धेन प्रकृतिस्त्वत्तौ भिन्नौ न तावुभौ ॥
शक्तिशक्तिमतोर्भेदः कल्प्यते न कदाचन ।
प्रकृतिः पुरुषश्चैव त्वमेवातः सदाशिव ! ॥१२४॥

हे परमेश्वर ! सृष्टि के समय योगबल से अपना शरीर विभक्त कर आप ही वामभाग से प्रकृति तथा दक्षिणभाग से पुरुष होते हैं। आपसे वे भिन्न नहीं हैं। शक्ति शक्तिमानों का कहीं भेद नहीं कहा जाता। इसलिए हे सदाशिव ! आप ही स्वयं प्रकृति तथा आप ही स्वयं पुरुष हो ॥ १२२, १२३, १२४ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आब्रह्मस्थावरान्तं च यत्किंचिद्युगलं प्रभो ! ।
तव रूपमिदं चैकं भेदबुद्धिर्मृषा खलु ॥१२५॥

ब्रह्मादिस्थावर तक जो भी स्त्री-पुरुष युगल हैं वे सब आपके ही रूप हैं। उनमें भेदबुद्धि मिथ्या है॥ १२५॥

यथाऽयोमणिनैकेन ज्ञातं लोहमयं भवेत् ।
एकेनैव तु पिंडेन ज्ञायते मृण्मयं यथा ॥१२६॥
त्वमेव सर्वरूपेण विज्ञातोऽसि सदाशिव ! ।
जगतो विविधाकारैः प्रकृत्या पुरुषेण च ॥१२७॥

जिस प्रकार लोहे की एक वस्तु को समझने पर समस्त लोहे के पदार्थ समझ में आ जाते हैं अथवा एक मृत्पिंड के ज्ञान से समस्त मिट्टी की चीजें जानी जाती हैं। उसी प्रकार जगत् में विविध आकारों से तथा प्रकृति पुरुष इत्यादि रूपों से हे सदाशिव ! आप ही जाने जाते हैं॥ १२६, १२७॥

त्वद्रूपेणैव भातोत्थं सर्वं सत्यमिदं प्रभो ! ।
कारणाभिन्नरूपेण कार्यं कारणमेव हि ॥१२८॥

यह समस्त जगत् आपकी सत्ता से ही सत्य भासता है, क्योंकि भ्रमरूप अध्यस्तकार्य मुख्य अधिष्ठानरूप कारण से अभिन्न ही रहता है। "निरधिष्ठानविभ्रांतिः केवला नहि तिष्ठति" ॥१२८॥

नमस्ते कार्यरूपाय नमः कारणरूपिणे ।
नमः प्रकृतिरूपाय नमः पुरुषरूपिणे ॥१२९॥

हे सदाशिव ! कार्यरूप, कारणरूप, प्रकृतिरूप, पुरुषरूप ऐसे आपको नमस्कार है ॥ १२९ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रुद्रस्त्वं विधिरूपोऽसि उमा वाणी सनातना ।
त्वं हि विष्णुरुमा लक्ष्मीस्तुभ्यं तस्यै नमो नमः ॥

हे रुद्र ! आप विधिरूप हैं तो भगवती उमा सत्यस्वरूप को बतलानेवाली वाणीरूप हैं। आप साक्षात् विष्णु हैं तो उमा लक्ष्मीरूप हैं। आपको और उमा को मेरा नमस्कार है ॥१३०॥

सूर्यस्त्वमसि छायोमा तुभ्यं तस्यै नमो नमः ।
त्वं हि सोम उमा तारा तुभ्यं तस्यै नमो नमः ॥

आप सूर्यरूप हैं तो उमा छायारूप हैं, आप चन्द्रमा हैं तो उमा तारारूप हैं। हे प्रभो ! आप दोनों को मेरा नमस्कार है ॥ १३१ ॥

त्वं हि वह्निरुमा स्वाहा तुभ्यं तस्यै नमो नमः ।
त्वं हि लिङ्गमुमा पीठं तुभ्यं तस्यै नमो नमः ॥

आप वह्निरूप हैं तो उमा स्वाहारूप हैं, आप लिङ्गरूप हैं तो उमा पीठस्वरूप हैं। मेरा आप दोनों को बार-बार नमस्कार है ॥ १३२ ॥

उमा नारी नरस्त्वं च रुद्रोऽसि परमेश्वर ! ।
सदैवैकात्मरूपेण तुभ्यं तस्यै नमो नमः ॥१३३॥

हे शिव ! समस्त नारीजन उमारूप हैं और समस्त नर आपके रूप हैं। हे परमेश्वर ! सदा एकात्मरूप ऐसे आपको और उनको बार-बार नमस्कार है ॥ १३३ ॥

रुद्रस्त्वं वृक्ष एवासि वल्ल्युमा च सुविस्तरा ।
त्वं हि गंध उमा पुष्पं तुभ्यं तस्यै नमो नमः ॥

हे रुद्र ! आप वृक्षरूप हो। वह उमा लतारूप से विस्तृत

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं। आप गन्धरूप हो। वह पुष्परूपिणी हैं। आप दोनों को मेरा नमस्कार है॥ १३४॥

रुद्रस्त्वमर्थ एवासि सा चोमा शब्द एव च।
सर्पिस्त्वं दध्युमा देवी तुभ्यं तस्यै नमो नमः॥

हे रुद्र! आप अर्थरूप हैं तो उमा शब्दरूप हैं। उमा दधिरूप हैं तो आप घृतरूप हैं। मेरा आप दोनों को नमस्कार है॥ १३५॥

उमा सौदामिनी चैव मेघस्त्वमसि शंकर!।
छायोमा त्वं च देहोऽसि तुभ्यं तस्यै नमो नमः॥

उमा विद्युत् हैं तो आप मेघरूप हैं। हे शंकर! आप देहरूप हैं तो उमा छाया हैं। मेरा आप दोनों को सतत नमस्कार है॥ १३६॥

बीजस्त्वं वृक्षविस्तारश्चोमा प्रोक्ता हि वैदिकैः।
आम्नायस्त्वं स्मृतिश्चोमा तुभ्यं तस्य नमो नमः॥

हे सदाशिव! आप बीजरूप हैं और भगवती उमा देवी विस्तृत वृक्षरूप हैं ऐसा वेदार्थ को जाननेवाले कहते हैं। आप वेदरूप हैं तो उमा स्मृतिरूप हैं। आप दोनों को नमस्कार है॥ १३७॥

निर्विकल्पमनाद्यं च रूपं ते शाश्वतं प्रभो!।
त्वदीया या स्मृतिः सोमा माया शुद्धेति कथ्यते॥

हे प्रभो! आपका रूप नित्य निर्विकल्प अनादि शाश्वत है और उमा आपकी स्मृति शुद्ध माया कही जाती हैं॥ १३८॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विस्मृतिश्च त्वदीया या सा चाविद्येति भण्यते ।
अविद्यावशगो जीवः मायोपाधिक ईश्वरः ॥

आपकी विस्मृति ही अविद्या कही जाती है। जीव अविद्या के पराधीन है। ईश्वर शुद्ध मायोपाधिक है ॥ १३६ ॥

'अहं ब्रह्मास्मि' या स्फूर्तिः प्रथमं कार्यमेव तत् ।
स्मृतिरूपेण यद्भाति सा मायेति प्रकल्प्यते ॥

ब्रह्म रूप आपमें 'अहं ब्रह्मास्मि' इस प्रकार की जो प्रथम स्फूर्ति होती है, वह आपकी स्मृति ही माया इस कल्पित नाम से लक्षित होती है। और यही प्रथम कार्य है ॥ १४० ॥

निःस्फूर्तिकस्वरूपोऽसि नित्यबोधोऽसि स्वप्रभः ।
न सेयं स्मृतिरूपा या स्फूर्तिर्माया त्वयि प्रभो ! ॥

हे प्रभो ! तुम निस्स्फूर्तिरूप हो ! नित्यबोधरूप हो ! स्वयं-प्रकाश हो ! वह स्मृतिरूपा माया वस्तुतः तुममें नहीं है ॥१४ ॥

निर्विकारस्वभावत्वाच्चिदेकरसरूपतः ।
त्वयि स्मृतिर्विस्मृतिश्च मायाऽविद्येति कल्पिते ॥

आपकी नित्यनिर्विकारता तथा चिन्मात्ररूपता के कारण आपमें इन स्मृतिविस्मृतिरूप माया अविद्याओं की उत्पत्ति तत्त्वतः हो नहीं सकती। अतः ये दोनों कल्पित ही हैं ॥१४२॥

स्मृतिस्त्वद्विषया चेयं ततस्त्वद्रूपमीर्यते ।
इतो सृष्टिश्च या साऽपि त्वमेवेत्युपचर्यते ॥१४३॥

आप ही इस स्मृति के विषय (लक्ष्य) हैं। अतः इसको और इससे आगे चलकर हुए सब कार्य को आपका ही स्वरूप माना जाता है ॥ १४३ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यथा रज्जौ निष्क्रियायां सर्पाभासविनिर्गमौ ।
अध्यारोपापवादौ च चिन्मात्रे निष्क्रिये त्वयि ॥

जिस प्रकार निष्क्रिय रज्जु में सर्पाभास के आविर्भाव तिरोभाव कल्पित ही होते हैं उसी प्रकार माया, अविद्या, तत्कार्य अध्यारोप (कल्पना) और अपवाद (निषेध) नित्य-चिन्मात्र निष्क्रिय आपमें केवल कल्पित ही हैं ॥ १४४ ॥

'नाहं ब्रह्म' च 'ब्रह्माहं' विस्मृतिश्च स्मृतिस्त्वियम् ।
अविद्या चैव माया च त्वयि न स्तः स्वभावतः ॥

'नाहं ब्रह्म' मैं ब्रह्म नहीं हूं, ऐसीविस्मृतिरूप अविद्या अथवा 'अहं ब्रह्म' मैं ब्रह्म हूं, ऐसी स्मृतिरूप माया नित्यनिर्विकल्प, चिद्रूप, स्वयंप्रकाश आपमें स्वभावतः हो ही नहीं सकती ॥ १४५ ॥

मामुद्धर दयासिंधो ! समावेश्य पदे त्वयि ।
विमोच्य मायाऽविद्याभ्यां तत्कार्याभ्यां तथैव च ॥

माया, अविद्या तथा उनके कार्यों से छुड़ाकर हे दयासागर ! मुझे अपने पद में एकरूप कर मेरा उद्धार कीजिये ॥ १४६ ॥

न चाग्निः सविता यत्र न चंद्रो न च तारकाः ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्याद्भान्ति यत्र न विद्युतः ॥१४७॥

जहां जगत् को प्रकाशित करनेवाले अग्नि, सूर्य, चन्द्र, तारागण, विद्युदादि नहीं हैं, जो अद्वितीय स्वयंप्रकाश है उस आपके दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो ॥ १४७ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यदैक्यं प्राप्य सर्गेऽपि न जायेऽहं कदाचन ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्याद् व्यथा यत्र लयेऽपि नो ॥

जिस ऐक्य को प्राप्त कर मुझे इस घोर संसार में पुनः जन्म न लेना पड़े, जहां दुःख देनेवाली जगत् की उत्पत्ति नहीं है, जहां प्रलय की व्यथा भी हो नहीं सकती, हे भगवन्! ऐसे आपके उस दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो ॥ १४८ ॥

न तेजो न तमो यत्र न कार्यं नापि कारणम् ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्यान्निर्विकल्पाद्वये चिति ॥

जिस पद में न तम है, न तेज है, न कार्य ही है, न कारण ही, उस नित्यनिर्विकल्प ऐसे आपके अद्वितीय पद में मेरा ऐक्य हो ॥ ४६ ॥

षड्भावविकृतिश्चास्ति जायते वर्धतेऽपि च ।
परिणामः क्षयो नाशो यत्र स्यान्न कदाचन ॥

जिस पद में अस्ति (रहना), जायते (उत्पत्ति), परिणमते (परिणाम), वर्धते (वृद्धि), क्षीयते (क्षय), विनश्यति (नाश) इस प्रकार के छः विकार कभी नहीं होते ॥ १५० ॥

अशनाया पिपासा च शोकमोहौ जरा स्मृतिः ।
एते षडूर्मयो यत्र नैव सन्ति न भान्ति वै ॥१५१॥

एवं अशना (भूख), पिपासा (प्यास), शोक, मोह, जरा और मृत्यु ये छः ऊर्मियां जिस पद में न हैं, न भासती हैं ॥ १५१ ॥

कामक्रोधौ लोभमोहौ मदो मात्सर्यमेव च ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्यादेतैर्मुक्तं च यत्सदा ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, इन छः शत्रुओं से सदा ही मुक्त है उस आपके दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो ॥ १५२ ॥

ज्ञानेन्द्रियाणि पंचैते श्रोत्रत्वग्लोचनादयः ।
कर्मेन्द्रियाणि पंचैते वाक्पाण्यंघ्र्यादयः क्रमात् ॥

श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा, घ्राण, ये पांच ज्ञानेन्द्रियां तथा वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ, ये पांच कर्मेन्द्रियां जिस पद में नहीं हैं ॥ १५३ ॥

प्राणादयस्तु पंचैते पंच शब्दादयस्तथा ।
धीर्मनोऽहंकृतिश्चित्तमथोऽन्तःकरणं न च ॥१५४॥

प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, ये पंच प्राण एवं शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, ये पांच विषय, मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त, अन्तःकरण आदि पंचक जहां नहीं हैं ॥ १५४ ॥

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्यान्न यत्रैते कदाचन ॥१५५॥

जहां पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, आकाश, ये पंचभूत भी नहीं हैं, उस आपके दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो ॥ १५५ ॥

देहत्रयं स्थूलसूक्ष्मकारणानि च यत्र नो ।
अवस्थात्रितयं चापि जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तयः ॥

स्थूल, सूक्ष्म, कारण, तीनों शरीर जहाँ नहीं हैं, जहाँ इन शरीरों के साथ इनके जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, ये तीनों अवस्थाएँ भी नहीं हैं ॥ १५६ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विश्वतैजसप्राज्ञाश्च विराट्सूत्रेश्वरा अमी ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्यान्न यत्रैते कथंचन ॥१५७॥

जहां अविद्योपाधिक जीव का जाग्रत् में स्थूल शरीर से अभिमान करनेवाला विश्वस्वरूप, स्वप्न में सूक्ष्मशरीर से अभिमान करनेवाला तैजसस्वरूप एवं सुषुप्ति में कारणशरीर से अभिमान रखनेवाला प्राज्ञस्वरूप नहीं है। इसी प्रकार जहां मायोपाधिक परमेश्वर का समस्त स्थूल सृष्टि से अभिमान करनेवाला विराट्, सूक्ष्म से अभिमान करनेवाला सूत्रात्मा (हिरण्यगर्भ) एवं कारण से अभिमान रखनेवाला ईश्वर-रूप भी नहीं है। उस आपके दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो॥१५७॥

नो नारी न नरः क्वापि नो पुमान्प्रकृतिस्तथा ।
तत्त्वत्पदे मदैक्यं स्याद्यत्रैते न क्वचित्कदा ॥

जिस पद में न नारीरूप है, न नररूप ही है, न पुरुषरूप है, न प्रकृतिरूप ही उस आपके दिव्य पद में मेरा ऐक्य हो ॥ १५८ ॥

न पिण्डं नापि ब्रह्माण्डं जीवेशौ यत्र न क्वचित् ।
तस्मिंस्तव पदे शुद्धे मदैक्यं कुरु शंकर ! ॥१५९॥

हे शङ्कर ! आपके जिस पद में न पिण्डब्रह्माण्डविभाग ही है, न जीवेशविभाग ही उस शुद्ध ब्रह्मपद में ही मेरा ऐक्य कर दें ॥ १५९ ॥

न रूपं न च माहात्म्यं वेद्मि ते परमेश्वर ! ।
यादृशोऽसि महादेव ! तादृशाय नमो नमः ॥१६०॥

हे महादेव ! मैं न तो आपके रूप ही को जानता हूं, न

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माहात्म्य ही का। स्वभावतः जैसे आप हैं आपके उस दिव्य रूप को मेरे बार-बार नमस्कार हैं॥ १६० ॥

गरीयसां गरिष्ठस्त्वं श्रेष्ठश्च श्रेयसामपि।
अणीयसामणीयांस्त्वं स्थविष्ठश्च स्थवीयसाम्॥

विशाल तत्त्वों से विशाल, श्रेष्ठों से श्रेष्ठ, अणु से अणु, व्यापक तत्त्वों को भी व्यापनेवाले आप हैं॥ १६१ ॥

अघटितमहिमा तवास्ति शंभो!
व्यभजत किल मौनतां श्रुतिश्च॥
प्रवचनकुशलः सहस्रजिह्वः
कथमहमिह पारमेमि देव!॥१६२॥

हे शंभो! आपकी महिमा अपार है। जिस विषय में श्रुति ने भी मौन धारण किया। जहां प्रवचन करने में अत्यन्त कुशल शेष सहस्र मुखों से भी वर्णन कर नहीं सके वहां मेरी क्या गिनती है?॥ १६२ ॥

निजमतिरिह बोधिता विमुक्त्यै
स्तवनमिति कृतं भवत्कृपाप्त्यै।
विमलमतिरहं भवत्कृपाप्त-
स्तव विमलपदे भवेयमेकः॥

मुक्त होने के लिए अपनी बुद्धि को ही बोध किया गया है। हे भोलेनाथ! आपकी कृपा सम्पादित करने के लिए यह स्तवन किया है। आपकी कृपा से मेरी बुद्धि शुद्ध होकर आपके निर्मल पद में एक हो जाने की मैं इच्छा करता हूं॥ १६३ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वस्वधर्मानुवर्ती स्याल्लोकोऽयं सर्वतः शुचिः ।
रुग्णा नीरोगिणः सन्तु सर्वे सन्त्वकुतोभयाः ॥

सब लोग स्वस्वधर्मानुवर्ती हो सब प्रकार से पवित्र रहें। रोगी आरोग्य को प्राप्त करें और सभी निर्भय हो जायँ ॥ १६४॥

अपुत्राः पुत्रवंतः स्युः निर्धनास्सधनास्सदा ।
दारिद्र्यं नापमृत्युश्च भवेच्छोको न संकटम् ॥

अपुत्रों को पुत्र हो, निर्धनों को धनप्राप्ति हो। कभी किसी पर दारिद्र्य, अपमृत्यु, शोक तथा संकट का प्रसंग न आवे ॥ १६५ ॥

सरित्तडागवाप्याद्यास्तोयपीयूषनिर्भराः
नातिवृष्टिरनावृष्टिः क्षामो भवतु न क्वचित् ॥

वापी, कूप, तलाव तथा नदियाँ अमृतसदृश पवित्र जल से सदैव पूर्ण रहें। अतिवृष्टि, अनावृष्टि और दुर्भिक्ष कभी कहीं न हों ॥ १६६ ॥

कालोद्भवफलाकीर्णास्सन्तु वृक्षाश्च सर्वतः ।
पृथ्वी सस्यसमृद्धा च तृणांकुरसमन्विता ॥

अपने-अपने ऋतु-काल के अनुसार वृक्ष पुष्प-फलों से भरे हुए विस्तृत छाया के द्वारा सर्वत्र सबकी सेवा करें। शस्य और वनस्पतियों से पृथ्वी सदैव भरी रहे और जहाँ-तहाँ तृणांकुरों से हरीभरी दिखाई दे ॥ १६७ ॥

राजानः सन्तु नीतिज्ञाः प्रजापालनकोविदाः ।
धार्मिका दानशौण्डाश्च सर्वदाऽजातशत्रवः ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शासकवृन्द सदैव निष्कंटक राज्य करें तथा दक्ष रहें! वे नीतिज्ञ हों! धार्मिक हों! तथा दानशील और शत्रुरहित हों! ॥ १६८ ॥

ब्राह्मणाः कर्मनिरता वेदवेदांगपारगाः ।
तपस्विनो ब्रह्मनिष्ठाः सन्तु विश्वसुखप्रदाः ॥

कर्मनिरत तथा वेदवेदांगों में निष्णात ब्राह्मण समुदाय तपस्वी एवं ब्रह्मनिष्ठ होकर सकल विश्व को सुख देने वाला हो ॥ १६९ ॥

सुपात्रब्रह्मवृन्दैश्च ब्रह्मनिष्ठैश्च साधुभिः ।
अन्नदानैश्च तीर्थानि सन्तु निःश्रेयसाय च ॥१७०॥

सब तीर्थस्थानों में पवित्र अन्नदान होता रहे तथा सब तीर्थों में सत्पात्र, सुशील ब्राह्मणों के तथा ब्रह्मनिष्ठ त्यागी साधुओं के कारण मोक्ष सुलभ हो ॥ १७० ॥

सर्वैः सुसेविता गावस्तुष्टाः पुष्टाः सवत्सकाः ।
दर्शनानन्ददायिन्यस्सर्वतः संतु निर्भयाः ॥१७१॥

सब लोगों से सुसेवित गोमाताएँ जहाँ-तहाँ पुष्ट एवं सन्तुष्ट होकर अपने बछड़ों के साथ निर्भय विचरती रहें और अपना कल्याणकारी दर्शन सदैव देती रहें! ॥ १७१ ॥

सच्छिष्यसद्गुरूणां वै मोक्षमार्गानुवर्तिनाम् ।
अकुंठितः संप्रदायो मेदिन्यां संप्रवर्तताम् ॥१७२॥

मोक्षमार्गानुवर्ती सद्गुरु एवं सच्छिष्यों का सम्प्रदाय पृथ्वी पर सदा ही अकुण्ठित होकर प्रतिदिन बढ़ता ही जाय ॥ १७२ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दानशीलाश्च धर्माढ्या वैश्या वाणिज्यसंयुताः ।
शूद्रास्सेवापराश्शुद्धास्सर्वे नन्दन्तु सर्वतः ॥१७३॥

वैश्यवर्ग धार्मिक एवं दानशील हो ! सदा ही व्यापारसम्पन्न रहे ! शूद्रवर्ग अपने सेवाधर्म में निरत एवं शुचि रहे ! सब ओर सब लोग हर्षनिर्भर और पूर्ण सुखी रहें ॥ १७३ ॥

न क्षोभो नापि मात्सर्यं न दैन्यं नाशुभा मतिः ।
न वैमनस्यं न द्वेषो लोके न कलहो भवेत् ॥१७४॥

किसी को कभी क्षोभ न हो ! मात्सर्य, दैन्य, अशुभमति कहीं न हो! किसी से किसी का वैमनस्य, द्वेष अथवा लोगों में कभी कलह न हो ॥ १७४ ॥

सौहार्दं बांधवप्रीतिः परस्परसहायता ।
मिथस्सहानुभूतिस्स्याल्लोकोऽयं सर्वदा सुखी ॥

सब लोग आपस में स्नेहभाव से, परस्पर सहानुभूति से तथा हितदृष्टि से रहें! इस प्रकार सब लोग सर्वदा सुखी बने रहें ॥ १७५ ॥

मातृभक्तौ पितृभक्तौ वृक्षच्छायेव दंपती ।
पातिव्रत्यं ब्रह्मचर्यं लोके देदीप्यतां सदा ॥१७६॥

सब दम्पती मातृभक्त हों, पितृभक्त हों ! एवं वृक्ष और छाया की भाँति अनुगत रहें ! जगत् में पातिव्रत्य एवं ब्रह्मचर्य अपने सम्पूर्ण तेज से सदैव विराजमान रहें ॥ १७६ ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विश्वस्य मौलिभूतोऽयं वेदधर्मः सनातनः ।
मध्यान्हसूर्यवद्भूमौ राराजतु विशेषतः ॥१७७॥

समस्त विश्व का मौलिभूत सनातन वैदिक धर्म मध्यान्ह सूर्य के समान पृथ्वी पर अपने सम्पूर्ण प्रकाश से सदा ही देदीप्यमान रहे ॥ १७७ ॥

ज्ञानविज्ञानसंपन्नः सदाचारसमन्वितः ।
विरक्तिभक्तिशुद्धात्मा लोकोऽयं सर्वदा भवेत् ॥

समस्त लोग ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न हों ! सदाचारी हों ! वैराग्ययुक्त तथा भक्तियुक्त हों और शुद्ध आत्मरूप हों ॥ १७८ ॥

सर्वेऽपि सुखरूपा स्युर्दुःखं कश्चिन्नचाप्नुयात् ।
भद्राणि सन्तु सर्वत्र शुद्धबोधः प्रवर्तताम् ॥१७९॥

सभी सुखरूप हों ! कोई भी दुखी न रहे ! सर्वत्र आनन्द-मङ्गल हो ! सर्वत्र शुद्धबोध की प्रवृत्ति रहे ॥ १७९ ॥

नदीरत्नं गंगा सकलनगरत्नं हिमगिरिः ।
प्रभारत्नं चंद्रः सकलयमिरत्नं पवनजः ॥
वधूरत्नं सीता सकलगुणिरत्नं रघुपतिः ।
गुरौ रत्नं शंभुर्जयति किल देवेषु मुखरः ॥१८०॥

जैसे सकल नदियों में श्रेष्ठ श्री गंगानदी है, सकल पर्वतों में श्रेष्ठ हिमवत्पर्वत है, सकल प्रभाओं में श्रेष्ठ चंद्रमा है, सकल जितेन्द्रियों में श्रेष्ठ पवनसुत हनुमानजी हैं, सकल वधुओं में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रेष्ठ श्री सीताजी हैं, सकल गुणियों में श्रेष्ठ श्री रामचन्द्र प्रभु हैं वैसे ही सकल सद्‌गुरुओं में पूछा जाय तो सब देवों के देव महादेव शम्भु श्रेष्ठ गुरु हैं उनकी सदैव जय हो ! जय हो !! जय हो !!! ॥ १८० ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
श्रीश्रीधरस्वामिना विरचितं
शिवशान्तस्तोत्रतिलकं सम्पूर्णम् ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ शिवाय नमः ॥

श्रीशङ्करजी की आरती

जय शंकर भोले, जय जय शंकर भोले।
शम्भु सदा मुक्तिप्रद, बहु करुणावाले ॥ जय ॥
सृष्टि स्थिति लय नियमन करतापि अकरता।
भक्तजनों का भव भय, शिव समूल हरता ॥जय॥
नाथ त्रिगुणशून्या, भवपोतरूप सांबा।
दीनबन्धु दुखियों का, तुम इक अवलम्बा ॥जय॥
ज्ञानशक्ति गिरिजाम्बा, जो वामाँग सदा।
चिन्मयि शिव की छवि जो भक्त ज्ञानप्रदा ॥जय॥
त्याग के भूषण अविरत, तनु में शोभित हैं।
चिन्मुद्राङ्कित तनु सब, निरुपम झलकत हैं ॥जय॥
अनन्त अनादि प्रभु तुम, तुमको नहिं काया।
भाव भक्त का वह यह, रूप धार आया ॥जय॥
एक अखण्ड अगोचर, सुखघन तुम शिव हो।
ब्रह्ममात्र मम रूपहिं, इसकी भूल न हो ॥ जय ॥
सबहिं उपास्य दैवत, होकर तुमहि सदा।
विधि श्रीधर शक्त्यादिक, देतहिं ब्रह्मपदा ॥
जय शंकर भोले, जय जय शंकर भोले।
शम्भु सदा मुक्तिप्रद, बहु करुणावाले ॥

सौ० सावित्रीबाई भागवत

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi